
चन्दामामा
मां-बच्चों का मासिक पत्र
1st Mar. '68
50
NAYE PAISE



उन दिनों ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। और विदेह का राजा महाजनक था। मिथिला नगर उसकी राजधानी थी। उसके दो लड़के थे। एक का नाम था अरिष्टजनक और दूसरे का नाम पौलजनक।

महाजनक की मृत्यु के बाद अरिष्टजनक ने अपना पट्टाभिषेक किया। और अपने भाई पौलजनक को युवराज निश्चित किया। पर थोड़े दिनों बाद अरिष्टजनक को नौकरों द्वारा मालूम हुआ कि.. उसका भाई उसको मारकर राज्य पाने की कोशिश कर रहा था। परन्तु अरिष्टजनक ने इसकी परवाह न की।

बड़े भाई की असावधानी देख कर पौलजनक ने अपनी अलग सेना इकट्ठी की, साजिश की। एक दिन भाई पर हमला करके उसने उसकी हत्या कर दी।

अरिष्टजनक की मुख्य पत्नी, उसकी हत्या के समय गर्भिणी थी। पति की हत्या की वार्ता पाते ही उसने अपने जेवर जवाहरात एक टोकरे में रखे और टोकरे को भुस से ढ़क दिया। फिर मैले कपड़े पहन लिए और सिर पर टोकरी रखकर राजमहल से निकली। रास्ते में उसे किसी ने न पहचाना। वह उत्तर द्वार से नगर से बाहर चली गई।

उसे न मालूम था कि किधर जाया जाये। कभी वह राजमहल से बाहर न निकली थी। यह जरूर सुना था कि कहीं कालपम्प नाम का नगर था। इसलिए वह अपनी टोकरी लेकर एक पेड़ के नीचे बैठ गई और आते जाते राहगीरों से पूछने लगी- "भाई, कालपम्प का कौनसा रास्ता है?" उसे कोई भी रास्ता न बता पाया।

आखिर एक बूढ़ा उस तरफ गाड़ी हाँकता आया। उसने रानी से कहा- "मैं भी उसी नगर की ओर जा रहा हूँ। गाड़ी में चढ़ बैठो। पैर भारी मालूम होते हैं। कोई बात नहीं। होशियारी से गाड़ी हाँकूँगा।" रानी उस गाड़ी से सफर करके कालपम्प नगर में पहुँची। गाड़ीवाला उसको एक चौपाल के पास छोड़कर चला गया। इसलिए वह चौपाल में बैठ गई, और आते जाते आदमियों को सावधानी से देखने लगी।

कुछ देर बाद, एक ब्राह्मण अपने शिष्यों के साथ स्नान करनेके लिए जाता हुआ उस तरफ से निकला। उसने चौपाल मैं एक गर्भिणी स्त्री को देखा। अपने शिष्यों को बाहर खड़े रहने के लिए उसने कहा और स्वयं जाकर रानी से बातचीत की।

"भाई, मैं मिथिलानगर की रानी हूँ। मेरा पति युद्ध में मारा गया है, इसलिए मैं अनाथ हो दर दर भटक रही हूँ। अब मेरा कोई नहीं है। मैं इस नगर में किसी को नहीं जानती।" रानी ने ब्राह्मण से कहा।



"यह बात है तो तुम मेरे घर में रह सकती हो। पर उससे पहले एक नाटक खेलना होगा। मेरे पैरों पर पढ़कर इस तरह रोओ, चिल्लाओ कि मेरे शिष्य सुन सकें। मैं किसी को तेरा भेद न जानने दूँगा।" ब्राह्मण ने कहा।

जो उसने कहा रानी ने किया। जब किसी स्त्री को गुरु के पैर पकड़ कर रोता देखा तो शिष्यों ने अन्दर आकर पूछा-"क्या?क्या बात है?" और भी इधर उधर जानेवाले कुछ आदमी वहाँ जमा हो गये।

ब्राह्मण ने उन सब से इस प्रकार कहा-"यह मेरी बहन है। यह मेरे ग्राम छोड़ने के बाद पैदा हुई। इसलिए मैंने इसको पहले कभी अच्छी तरह जाना पहचाना न था।"

इस बात पर सबको विश्वास हो गया। ब्राह्मण उसको अपने घर ले गया। उसको स्नान करवाकर भोजन करवाया। कुछ दिनों बाद उसने एक लड़के को जन्म दिया। उस लड़के का नाम भी उसने वही रखा, जो उसके ससुर का था, महाजनक। यह महाजनक ही बोधिसत्व था।

महाजनक धीमे धीमे बड़ा होने लगा। उसके क्षत्रिय साथी, उसको हीन दृष्टि से देखते। यह देख महाजनक को गुस्सा आता और उन्हें बुरी तरह पीटता। वे रोते रोते अपने घर जाते और अपने माता पिता से कहते कि उस 'विधवा' के लड़के ने हमें पीटा है। जब कभी महाजनक, "विधवा का लड़का" सुनता तो उसे सन्देह होता कि उसका पिता कौन था। पहले तो माँ ने उसको सच न बताया। परन्तु महाजनक ने जानने की जब जिद पकड़ी तो उसने सारी बात बता दी।



जब उसे मालूम हुआ कि उसके चाचा ने उसके पिता की हत्या करके, विदेह का राज्य हथिया लिया था तो उसके मन में अपना राज्य वापिस लेने की इच्छा हुयी। सोलहवाँ साल आते ही उसने अपनी शिक्षा समाप्त की और माता से कहा-"माँ, विदेह राज्य को जीतूँगा। क्या तुम्हारे पास कुछ रुपया पैसा है? अगर हो तो दो।"

उसने वह जेवर जवाहरात दिखाये, जो मिथिलानगर से वह टोकरी में छुपा कर लाई थी। उसमें से महाजनक ने आधे ही लिये। वह मिथिलानगर के लिए निकल गया।

ठीक उसी दिन मिथिलानगर के महाराजा पौलजनक का एक हाथ और एक पैर गिर गया। उसने चारपाई पकड़ी। और जिस दिन महाजनक ने मिथिलानगर में पैर रखा, वह मर गया।

उसका कोई उत्तराधिकारी न था। राजपुरोहित ने रथ पर राज किरीट, राजछत्र, राजदण्ड , पादुका आदि, रखकर, रथ को यथेष्ट चलने दिया। पुरोहित और मन्त्री रथ के पीछे चल रहे थे। वह रथ



उस उद्यान में जाकर रुका, जहाँ महाजनक उस समय विश्राम कर रहा था। सबने आश्चर्य से एक दूसरे को देखा।

राजपुरोहित ने महाजनक की परीक्षा की। उसके शरीर पर राज लक्षण थे। इसलिए उसने उसको विदेह का राजा घोषित किया। उसका पट्टाभिषेक हुआ। फिर महाजनक ने सीवली देवी से विवाह किया। और आराम से राज्य करने लगा। उसके दीर्घायु नाम का एक लड़का भी हुआ।

काफी दिन बीत गये। एक दिन महाजनक को बाग बगीचे देखने की इच्छा हुयी। वह अपने हाथी पर सवार हो कर निकला। बाग में घुसते ही उसने दो आम के पेड़ों को देखा। उनमें से एक पेड़ तो फलों से लदा था और दूसरे पर एक भी न था। उसने एक फल तोड़कर खाया। वह बहुत स्वादिष्ट था। उसने सोचा कि वापिस जाते जाते कुछ और फल ले जाऊँगा।

वह आगे गया था कि उसके नौकर चाकरों ने आम लपक लपक कर खाये। कई ने तो टहनियाँ भी तोड़ दीं। वह सुन्दर आम का पेड़ देखते देखते नङ्गा-सा हो गया।

बाग बगीचे देखकर जब राजा वापिस आ रहा था तो वह आम का पेड़ देखकर चकित हुआ। उसके पास का बाञ्झ आम का पेड़ पहले की तरह सुन्दर था।

"यह मेरे लिए एक पाठ-सा है। राज्य, और ये वैभव, फलोंवाले पेड़ की तरह हैं। सन्यास बाञ्झ पेड़ की तरह है। कोई इसके पास नहीं आता। यह सब वैभव छोड़कर मैं सन्यास स्वीकार करूँगा।" महाजनक ने सोचा।

(अगले अङ्क में समाप्त)





[१४]

[जहाज के कप्तान के कारण गुलामों ने कई मुसीबतें झेलीं। पिङ्गल के नेतृत्व में उन्होंने बलवा किया और सरदार को मार दिया। उसी समय शत्रु-पोत उनके जहाज के पास आया। पिङ्गल ने अपने जहाज को शत्रु के जहाज़ से टकरा दिया। उस टक्कर के कारण पिङ्गल अपनी जगह से उछलकर समुद्र में जा गिरा। उसके बाद]

पिङ्गल डुबकी लगाकर बाहर उठा और तैरता हुआ इधर उधर देखने लगा। जब दोनों जहाज टकराये तो वे चकनाचूर से हो गये। उनके शहतीर, मस्तूल, पाल चारों ओर थपेड़े खा रहे थे। डूबते नाविकों का हाहाकार तूफान के शोर में मिल गया था। सर्वत्र प्रलय-सा मालूम होता था।

ऊँची ऊँची तरङ्गों में फँसकर पिङ्गल हक्काबक्का रह गया था। कहीं सुरक्षित पहुँचने के लिए कोई जहाज़ न था, नाव न थी। अगर वह तैरकर भी कहीं पहुँचना चाहता तो उसे न मालूम था कि किनारा किस तरफ था। जब यह उसे मालूम हुआ कि उसके दुश्मन और साथी भी उसी हालत में थे तो न जाने क्यों वह खुश हुआ और दुःखी भी।

पिङ्गल न जान सका कि प्राण-रक्षा के लिए किस दिशा की ओर तैरे। अगर



कहीं भूमि नजर न आये तो यूँ ही हाथ पैर मारकर थक जाना फालतू था। यह वह भलीभाँति जानता था। परन्तु समुद्र इतना अशान्त था कि प्रतिक्षण वह उसे जोर जोर से थपेड़े मार रहा था।

करीब करीब सवा घण्टा तक पिङ्गल डूबता, तैरता जिधर उसे लहरें ले जाती उधर चला जाता। जब वह सोच ही रहा था कि उसकी मौत अधिक दूर न थी तो उसके हाथ में कोई चीज़ आई। पिङ्गल ने झट उसे जोर से पकड़ लिया। उसका धीरज बँधा।

जैसे उसकी माँ ने कहा था, भाग्य हमेशा उसका साथ देता था। पिङ्गल के हाथ में जो चीज़ आई थी वह जहाज़ का एक टूटा शहतीर था। पिङ्गल ने भगवान को धन्यवाद दिया। उस शहतीर को जोर से दोनों हाथों के बीच में लाकर वह उस पर लेट गया। उसे यह आशा होने लगी कि एक न एक दिन तूफ़ान ओर समुद्र की तरङ्गें किसी न किसी किनारे पर उसे पहुँचाकर रहेंगी। उस समय न उसे ठण्ड की फिक्र थी, न भूख की ही। वह न खुश था न दुःखी ही।

शहतीर तरङ्गों के साथ डूबता तैरता चलता जाता था। पिङ्गल ने आँखें मूँद ली और शहतीर को जोर से पकड़ लिया ताकि वह उसके हाथ से निकल न जाये। उसने यह भी जानने की कोशिश न की कि चारों और क्या हो रहा था। उसे डर था कि अगर उसने जानने की कोशिश की तो उसका रहा सदा धीरज भी जाता रहेगा। वह बहता गया।

कई घण्टे बीत गये। सूर्य कहीं समुद्र के पीछे अस्त हो गया। अन्धकार छा गया। पर पिङ्गल को इन सबका भान न था। उसने

आँखें बन्दकर रखी थी। सिवाय समुद्र के शोर और कम्पानेवाली सरदी के उसे कुछ न मालूम था। उसकी जवान सूख सी गई थी। पिङ्गल ने अनायास थोड़ा-सा समुद्र का पानी निगल लिया। उसे उल्टी-सी आने लगी। उसने शहतीर पर करवट ली। धीमे-धीमे मूख, नींद, शहतीर, शोर करता समुद्र, जान का खतरा, यह सब भूलकर वह यकायक सो गया।

पिङ्गल ने जब आँखें खोलीं तो आकाश साफ़ था। शान्त था, नीला था। शरीर का उपरला भाग, उसे ऐसा लग रहा था जैसे उसे कोई भट्टी में भून रहा हो। पैर ठण्ड के कारण जम से रहे थे।

यह हालत पिङ्गल को बड़ी विचित्र-सी लगी। वह कहाँ था? उसने मुश्किल से सिर उठाकर देखा। जहाँ देखो वहीं रेत थी। उसका कलेजा थम सा गया। प्राण भय के साथ उसमें एक प्रकार की विचित्र शक्ति आ गई। कोहनी भूमि पर रखकर उसने उठने की कोशिश की। दोनों पैर पानी में थे। शान्त महासमुद्र बिना किसी तरङ्ग के दिखाई पड़ता था। पिङ्गल को थोड़ी देर दिग्भ्रम-सा हो गया।



फिर उसको जानने में देर न लगी कि वह किस प्रदेश में था और उसके आस पास क्या था। एक तरफ समुद्र था और दो तरफ रेगिस्तान, जहाँ कोई पेड़ पौधा न था।

पिङ्गल ने, आँखों पर हाथ रखकर ताकि सूर्य की तेज किरणें उनपर न पड़े, लड़खड़ाते दो कदम आगे रखे। उसने दूर तक देखा। थोड़ी दूरी पर उसे कुछ गिद्ध दिखाई दिये। वे कहीं जा नहीं रहे थे। परन्तु एक ही जगह मण्डरा मण्डराकर नीचे उतर रहे थे। पिङ्गल को आश्चर्य तो हुआ ही, पर साथ उसमें आशा भी जगी। उसने



अनुमान किया कि जहाँ गिद्ध उतर रहे थे, वहाँ जरूर कोई तालाब होगा, नहीं तो दो चार घर होंगे ही। उसकी रही सही शक्ति सहसा दुगनी चौगुनी होगई। उन गिद्धों के उतरने की जगह पर नजर गाड़कर वह जलते रेत में धीमे धीमे पैर रखता आगे चला। चलना उसके लिए बहुत मुश्किल हो रहा था।

कुछ देर बाद पिङ्गल उस जगह पहुँचा। वहाँ गिद्ध उतरकर किसी चीज़ के चारों ओर चक्कर काट रहे थे। वह दृश्य देखकर पिङ्गल हैरान रह गया। वह आगे न बढ़ सका।

एक व्यक्ति के हाथ पैर रस्सी से बाँधकर पत्थर से बन्धे थे। वह पथरा सा गया था। गिद्ध उसको नोच नोचकर खाने के लिए इकट्ठा हो रहे थे। क्षण भर पिङ्गल ने आगे की ओर देखा फिर वहाँ पड़े एक छोटे पत्थर को लेकर गिद्धों पर फेंका। तुरन्त कुछ गिद्ध उसे देख पंख फड़फड़ाते ऊपर की ओर उड़े। और कुछ दूरी पर जाकर खड़े होकर उस तरफ देखने लगे जो उनका आहार बन सकता था। वे यहाँ से बहुत दूर न गये।

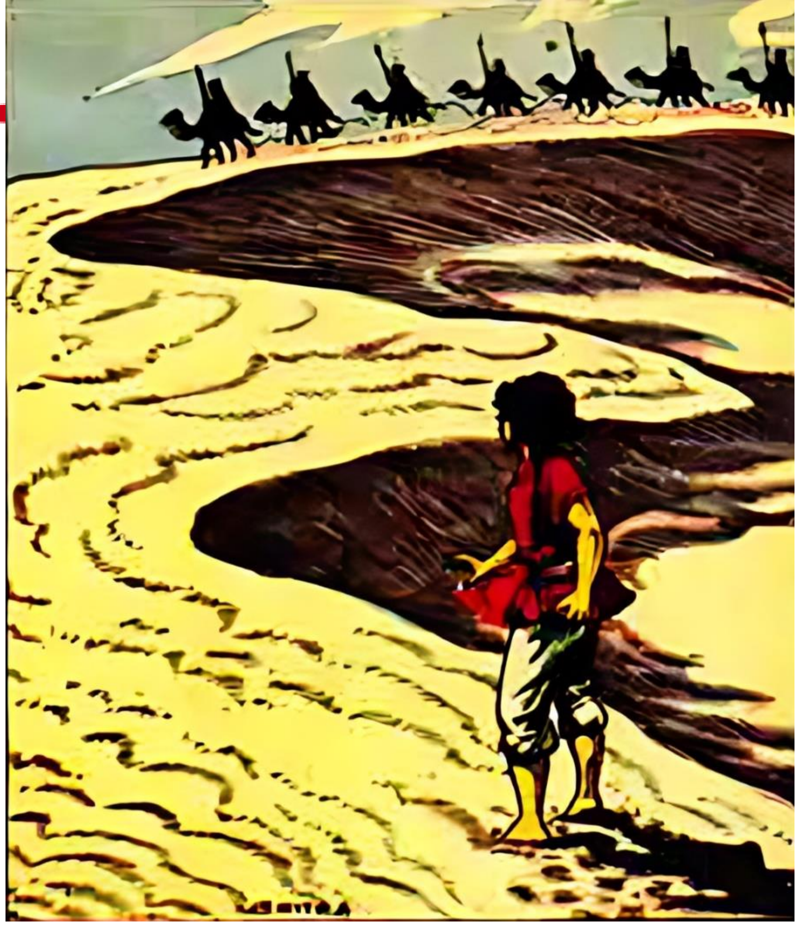
पिङ्गल उस व्यक्ति के पास गया। उसकी आँखें बन्द थीं। वह जिन्दा था कि नहीं यह जानने के लिए उसने उसकी छाती पर हाथ रखकर देखा। पर कोई धड़कन न थी।

पिङ्गल यह अनुमान भी न कर सका कि उस रेगिस्तान में उस व्यक्ति को क्यों इस तरह मारा गया था। परन्तु उसे उस समय एक दूसरी बात समझ में आई। उस निर्जन मरुभूमि में कहीं न कहीं मनुष्य रहते होंगे। वे लोग कैसे हैं, इस बारे में अनुमान करना अधिक कठिन न था। जो लोग

एक आदमी को निस्सहाय करके गिद्धों के आहार के लिए छोड़ गये हों वे क्रूर ही होंगे, यह पिङ्गल ने अनुमान किया। यह अनुमान करके उसे थोड़ा भय भी हुआ।

अब उसको क्या करना चाहिये? पहले प्यास बुझाने के लिए थोड़ा पानी चाहिये। फिर भूख मिटाने के लिए थोड़ा भोजन, ये उसे कहाँ मिल सकते हैं? और हो सके तो ठरहने के लिए जगह। पिङ्गल जब इस समस्या में उलझा हुआ था तो दूर रेगिस्तान में घूमनेवाले एक ऊँटों की पल्टन के सरदार ने उसे, उसके पास पड़े मृत व्यक्ति को और मण्डरानेवाले गिद्धों को दूर्बीन से देखा। तुरन्त उसकी आज्ञा पर वह पल्टन बहुत तेजी से उस प्रदेश की ओर भागने लगी। अन्यथा सब कुछ सुनसान था।

पिङ्गल को, दूरी पर रेत उड़ती देखकर आश्चर्य हुआ। फिर जब रेत उड़ानेवाले ऊँटो की पल्टन को देखा तो उसमें उत्साह पैदा हुआ और भय भी। अगर वे ड़ाकू हों तो उसकी जिन्दगी ही खतम करदेंगे, उसे यह डर लगा। लेकिन कहीँ



दौड़कर प्राण बचाने के लिए न कोई जगह थी न जाने के लिए शक्ति ही, और उसकी हालत तो इतनी खराब हो गई थी कि वह कदम उठाकर भी न रख सकता था।

पिङ्गल अभी इसी उपेड़ बुन में था कि पलटन वहाँ आ ही पहुँची। गम्भीर ऊँची आवाज में जब सरदार ने आज्ञा दी तो सबने ऊँटों से उतर कर पिङ्गल को घेर लिया। पिङ्गल की मुख की बात मुख में ही रह गई। उनके सरदार ने पिङ्गल की ओर घूर कर देखा.... जैसे उसकी परीक्षा कर रहा हो। "क्या तुम गिद्ध



गिरोह के हो?" उसने यह पूछते हुये मृत व्यक्ति को झुककर देखा। तुरन्त अपने सैनिकों की ओर मुड़कर उसने कहा-"यह मरा आदमी हमारा ही है।....किले के और पहरेदार कहाँ हैं? कहीं किला 'गिद्ध' के वश में तो नहीं आ गया है?" कहता कहता पलटन का सरदार अचरज करने लगा।

इस बीच पलटन के एक आदमी ने पिङ्गल की पीठ पर भाला थामकर कहा-"सच बोलो, तुम्हारा सरदार 'गिद्ध' कहाँ है?"

पिङ्गल को वह प्रश्न बिलकुल समझ में नहीं आया। शायद वह 'गिद्ध' किसी डाकुओं के गिरोह का सरदार होगा। अगर यह बात हो तो ये लोग कौन हैं?" वह सोचने लगा।

"मैं किसी का अनुयायी नहीं हूँ। मैं किसी गिरोह का नहीं हूँ। समुद्र में तूफान के कारण मेरा जहाज चकनाचूर हो गया था... भगवान की कृपा से जिन्दा इस तीर पर लगा हूँ। यहाँ गिद्धों को इस आदमी को खाता देख मैं चला आया। यह कौन देश है, इस रेगिस्तान का क्या नाम है, यह भी मैं नहीं जानता हूँ।" पिङ्गल ने कहा। पलटन के सरदार ने एक बार और पिङ्गल की ओर तीव्र दृष्टि से देखा। "अगर तू सच कह रहा है तो तुझे कोई डर नहीं है। अगर यह झूठ साबित हुआ तो तुम्हे टुकड़ों टुकड़ों में काट कर इन गिद्धों से नुँचवा दूँगा। तु अब अफ्रीका समुद्र के किनारे, अरेबिया देश के एक प्रान्त में है। में नवाब की ऊँटों की पलटन का सरदार हूँ। तेरे जहाज का समुद्र में डूब जाना.... सब सच कहना होगा, समझे?"

पिङ्गल को जब यह मालम हुआ कि वे चोर डाकू न थे, बल्कि नवाब के सैनिक थे तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। उस रेगिस्तान पर राज्य करनेवाला नवाब, और उसकी ऊँटों की पल्टन का सरदार चाहे कैसे भी हो पर उनसे उस समय मौत का डर न था।

बाद में परिस्थिति के अनकूल जो कुछ करना होगा वह किया जा सकता है। उसने सोचा कि अपनी पहले की कहानी छोड़कर, जब से वह जहाज का गुलाम बना था... वह जीवनी उस सरदार को सुना सकता है।

पिङ्गल ने विस्तार पूर्वक पल्टन के सरदार को, जहाज के कप्तान और समुद्र में उस जहाज का एक और जहाज के साथ मुकाबले के बारे में बातें सुनाई। सब सुनकर पल्टन के सरदार ने एक बार हँसकर कहा- "तो इसमें कोई शक नहीं है कि जिस जहाज ने तुम्हारा मुकाबला किया था, उसमें भी गुलाम थे?"

"हाँ, इसमें कोई सन्देह नहीं है। जब मैने उस जहाज के कप्तान से सुलह



समझौते की बातचीत छेड़ी तो उसके जवाबों से साफ मालूम होता था कि वह गुलामों के बेचने, व खरीदने का ही व्यापार कर रहा था।" पिङ्गल ने झट उत्तर दिया।

सरदार ने सिर हिलाकर कहा- "मेरा नाम हुसन गौरी है। क्योंकि तुमने मेरी तरह लड़ाई में बहुतों का नेतृत्व किया है, हैसियत में तुम मेरे बराबर हो। तुम मुझे मेरे नाम से पुकार सकते हो।" हम एक रेगिस्तान के डाकू को जो "गिद्ध" कहलाया जाता है, मारने के लिए इस रेगिस्तान में गश्त लगा रहे

हैं। यह व्यक्ति, जिसको हाथ पैर बाँधकर मार दिया गया है, वह नवाब का ही एक सैनिक है। यह उन लोगों में से एक है जो इस किले की रक्षा कर रहे हैं। इसको वह "गिद्ध" किस तरह पकड़ सका, मुझे समझ में नहीं आ रहा है। मुझे तो यह डर है कि कही बदकिस्मती से किला तो गिद्धों के वश में नहीं आ गया है।"

उसने सैनिकों की ओर मुड़कर कहा-"हमें इसे भी पलटन का एक आदमी समझना चाहिये। कुछ पहनने को भी दो। विचारा भूख के कारण छटपटा रहा है। खाना और पानी दो।

हसन के यह कहते ही पिङ्गल की जान में जान आई। सैनिकों की दी हुई रोटी और पानी पीकर वह आसानी से खड़ा हो गया। तुरन्त हसन ने पिङ्गल को एक ऊँट दिखाते हुए कहा-"यह ऊँट अब से तेरी सवारी के लिए है। हम अभी चल रहे हैं, मेरा सन्देह है कि कहीं इस किले को तो "गिद्ध" ने नहीं ले लिया है।" फिर उसने एक सैनिक से कहा- "इस शव को एक ऊँट पर डाल दो। किले के पास इसे गड़वा देंगे। इन गिद्धों के खाने के लिए उसे छोड़ देना बहुत पाप है। जल्दी करो।"

थोड़ी देर में ऊँटों की पलटन निकल पड़ी। रेगिस्तान के तूफान में चलती चलती, सूर्यास्त के समय वह किले के समीप पहुँची। आस-पास सारी जगह सुनसान थी। हसन गौरी ने पिङ्गल की ओर मुड़कर आश्चर्य से भौहों को सिकोड़ते हुए किले की ओर हाथ उठाया।

(अभी और है)





पद का प्रभाव

विक्रमार्क फिर एक बार पेड़ के पास गया। पेड़ पर टङ्गे शव को उतारकर, कन्धे पर डाल, चुपचाप शमशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! तुम एक राजा होते हुए भी एक अपरिचित भिक्षुक के लिए इतने कष्ट उठा रहे हो। यह सचमुच बहुत प्रशंसनीय है, क्योंकि राजा, प्रायः कृतज्ञता भी प्रकट नहीं करते। यह दिखाने के लिए मैं वीरसिंह की कथा सुनाता हूँ। सुनो।"

किसी जमाने में वीरसिंह नाम का एक पराक्रमी मालवा देश में रहा करता था। वह खास धनी न था। फिर भी उसने किसी राजा के यहाँ नौकरी न की। वह अपने बल साहस का लोगों को



चोर डाकुओं से बचाने में उपयोग करता। जिस प्रकार राजाओं को हिंस्र जन्तुओं का शिकार करना पसन्द है, उसी प्रकार वीरसिंह को ड़ाकुओं का शिकार करना पसन्द था।

आखिर वीरसिंह ने तलवार तब तक म्यान में न रखी जब तक उसने मालवा देश के जङ्गलों से डाकुओं का नामोनिशान न मिटा दिया। बड़े बड़े ड़ाकू उसके साथ लड़े और उसकी तलवार के शिकार हुये। छोटे मोटे चोर दूसरे देशों में भाग गये। जो राजा कई पीढ़ियों से न कर पाये थे वीरसिंह ने अकेला कर दिखाया। उसके पराक्रम के कारण स्त्रियाँ भी जङ्गल में अकेली सुरक्षित आ जा सकती थी। इसलिए मालवा देश में हर कोई वीरसिंह को भगवान समझता।

यद्यपि वीरसिंह ने अपनी आधी से अधिक जिन्दगी ड़ाकुओं के नाश करने में बिता दी थी, तो भी वह कीर्ति के सिवाय कुछ न पा सका। कार्य समाप्त होते ही वह अपने ग्राम चला गया और वहाँ अकेला रहने लगा। उसने शादी न की थी, न उसके कोई भाई बहन ही थे। एक नौकर उसके लिए रसोई और इधर उधर के काम कर देता।

एक दिन वीरसिंह अपने घर के सामने बैठा हुआ था। रसोई के खतम होने का इन्तजार कर रहा था। तब एक जादूगर वहाँ आया।

"बीरसिंह! में बहुत दूर देश से आया हूँ। पर जब से इस देश में पैर रखा है, तब से हर कोई तेरी ही प्रशंसा कर रहा है। इसलिए तुम्हें देखने के लिए चला आया हूँ। तुम इतने पराक्रमी हो, क्या तुम राजा नहीं बनना चाहते? बिना

किसी पद के तुमने प्रजा की इतनी सेवा की है, यदि एक पद मिल गया तो कितनी सेवा कर सकोगे, इसका जरा अनुमान तो करो।" जादूगर ने कहा।

"मैंने वह बात कभी नहीं सोची है।" वीरसिंह ने कहा।

"तो अब सोच लो।" जादूगर ने कहा।

"चोरों के भाग जाने के बाद मेरे पास कोई काम भी नहीं रह गया है। राजा बन जाऊँ तो अच्छा ही होगा। पर मैं राजा कैसे बन सकता हूँ?" वीरसिंह ने पूछा।

"अगर कोई तुम्हें राजा बना दे तो क्या तुम उसे खूब इनाम दोगे?" जादूगर ने पूछा।

"हाँ, जरूर।" वीरसिंह ने कहा।

"मैं तुम्हें राजा बना दूँगा। पर तुम्हें मुझे हर साल सौ मुहरें देनी होगी।" जादूगर ने कहा।

"सौ मुहरें ही? चाहो तो हजार दूँगा।" वीरसिंह ने कहा।

"मैं सौ मुहरें ही चाहता हूँ। अगर तुम वचन निभाओ तो यही काफ़ी है।" जादूगर ने कहा।



जादूगर अपनी जादू के प्रभाव से एक क्षण में चित्रकूट राज्य के किष्किन्धा नगरी में पहुँच गया।

किष्किन्धा का राजा उसी दिन सवेरे ही मरा था। उसके केवल तीन साल का लड़का था। किष्किन्धा के मन्त्रियों ने मिलकर उसको राजा बना दिया और वे यह निर्णय कर रह थे कि उसके बड़े होने तक वे स्वयं ही राज्य का पालन करेंगे।

ठीक उसी समय एक जादूगर वहाँ प्रत्यक्ष हुआ। "राजकुमार का गद्दी पर बिठाना ठीक है। पर उन चोर डाकुओं के

बारे में क्या सोचा है, जिन्होंने चित्रकूट में अड्डा जमा रखा है? जब उन्हें मालूम होगा कि राजा नाबालिग है तो क्या वे चुप बैठे रहेंगे? क्या वे किष्किन्धा नगर पर हमला न करेंगे?" उसने पूछा।

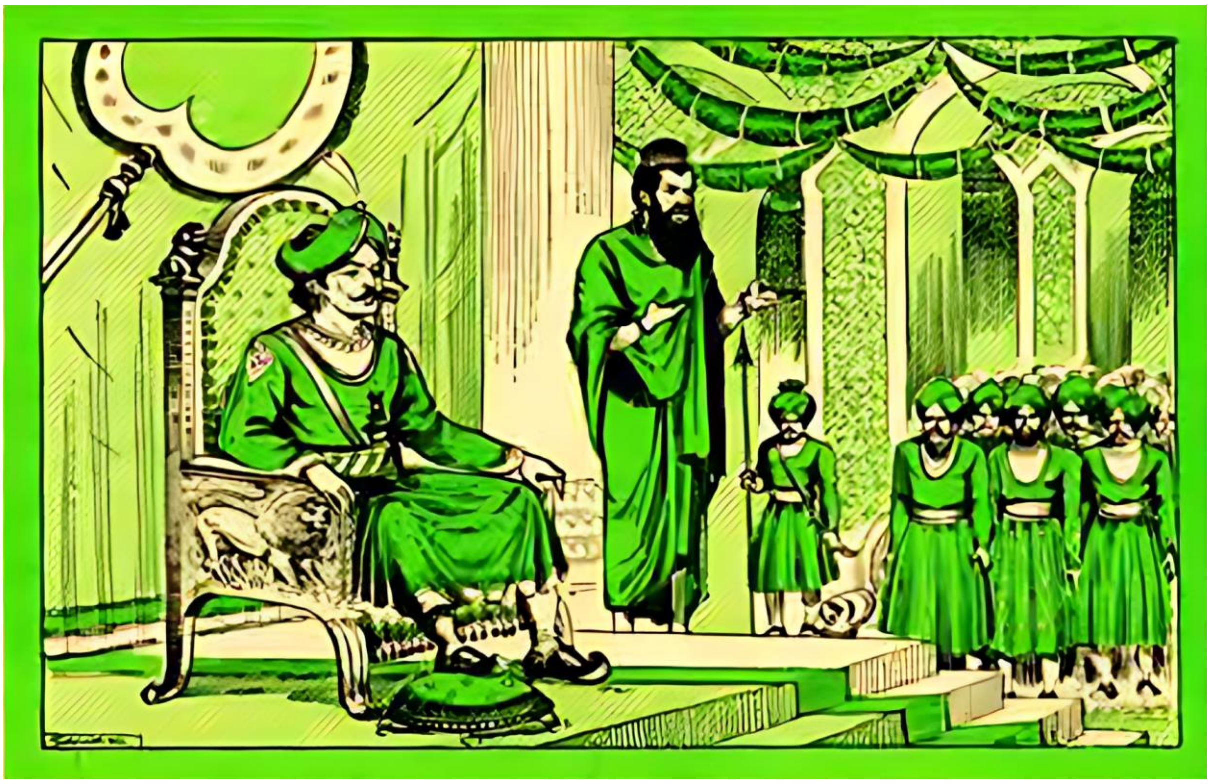
"यह सच है; पर इसका क्या उपाय है?" मन्त्रियों ने जादूगर से पूछा।

"मालवा देश में वीरसिंह नाम का एक पराक्रमी है। उसका नाम सुनते ही बड़े बड़े ड़ाकू काँपने लगते हैं। अगर युवराज के बड़े होने तक हमने वीरसिंह को राजा बना लिया तो ड़ाकुओं का भय जाता रहेगा। जनता सुखी होगी। कालक्रम से युवराज बड़ा होगा और गद्दी पर बैठेगा।" जादूगर ने कहा।

"यह अच्छा उपाय है। परन्तु वह बीरसिंह कब किष्किन्धा पहुँच सकेगा?" मन्त्रियों ने पूछा।

"इसकी फिक्र आप मत कीजिये। आप राज्याभिषेक की तैयारियों करते रहिये, में अभी वीरसिंह को यहाँ बुलाता हूँ।" जादूगर ने कहा।

उसने वैसा ही किया। उस दिन शाम को वह वीरसिंह को किष्किन्धा ले आया।



अगले दिन वीरसिंह का राज्याभिषेक हुआ और वह किकिन्धा का राजा बन गया। देश की रुढ़ि के अनुसार रानी उसकी पत्नी बन गई। इस प्रकार जादूगर की सहायता से बीरसिंह न केवल राजा ही बना अपितु उसको एक पत्नी और लड़का भी मिला। वह गृहस्थी बन गया।

जब ड़ाकुओं को मालूम हुआ कि बीरसिंह राजा बन गया है तो चित्रकूट के चोर डाकू इधर उधर भाग गये।

वीरसिंह को दिन भर काम रहता। सवेरे से शाम तक मन्त्रियों के साथ बैठकर राज्य का कार्य देखा करता। अगर समय मिलता तो अपनी पत्नी बेटे के साथ बिताता।

देखते देखते एक साल बीत गया। अपना इनाम लेने के लिए जादूगर आया। उसको देखते ही वीरसिंह ने एक थैली में सौ मुहरें मंगाकर उसे दे दी। जादूगर थैली लेकर चला गया।

मन्त्री आपस में कुछ कानाफूसी करने लगे-"हम दिन रात राजा की सेवा करते हैं और कोई पराया आकर सौ मुहरें वसूल करके ले गया। क्या यह ठीक





है?" उन्होंने राजा से कुछ न कहा; पर राजा ने उनकी कानाफूसी सुन ली थी।

एक और वर्ष बीत गया। वीरसिंह क्योंकि काम में व्यस्त रहता इसलिए उसे यह मालूम भी न हुआ। जादूगर के आने से यह जान सका कि साल गुजर गया था। परन्तु पिछली बार की तरह उसे देखते ही उसने मुहरें नहीं मंगवाई।

"मेरा इनाम क्या दिलवायेंगे?" जादूगर ने पूछा।

"क्यों नहीं दूँगा?" कहते हुए वीरसिंह ने सौ मुहरें मंगवाकर जादूगर को दिलवा दीं। उसने अपने मन्त्रियों को फिर कानाफूसी करते देखा। उसने जादूगर से कहा-"अब से हर साल न आया करो, एक साल छोड़कर एक साल आया करो।"

"फिर अगले वर्ष दर्शन करूँगा।" कहकर जादूगर चला गया। जैसे उसने वीरसिंह की बात सुनी ही न हो।

वह फिर तीसरे वर्ष उपस्थित हुआ। ठीक उसी समय मन्त्री उसके पास बैठे किसी बात पर विचार-विमर्ष कर रहे थे।

"मेरी सौ मुहरें देकर मुझे क्या भेजेंगे नहीं?" जादूगर ने पूछा।

"हर चीज़ के लिए कोई न कोई समय होना चाहिए। मैं इस समय बहुत जरूरी काम में मशगूल हूँ।" बीरसिंह ने कहा।

"बहुत जरूरी काम है।" मन्त्रियों ने कहा।

"मैंने कभी न सोचा था कि तुम छोटे से इनाम के लिए मुझे इसतरह तङ्ग करोगे।" वीरसिंह ने कहा।

"ठीक, महाजन जैसा है।" मन्त्रियों ने कहा।

"तुम में बिल्कुल कृतज्ञता नहीं है।" वीरसिंह ने कहा।

"चार लातें मारकर चलता कीजिये।" मन्त्रियों ने कहा।

"अब फुरसत नहीं है, फिर कभी आना।" वीरसिंह ने कहा।

"तुम्हें ही तो कह रहे हैं! जाओ। फिर कभी अपना मुँह न दिखाना। गनीमत है कि राजा अच्छे हैं।" मन्त्रियों ने कहा।

"राजा! तुम्हें याद है वह समय जब हम पहली बार मिले थे।" जादूगर ने पूछा।

"याद क्यों नहीं है?" कहते हुये वीरसिंह ने आखें मूँद लीं। उसे याद आ गया कि वह कैसे खाना बनने की इन्तजार में था और कैसे जादूगर आया था। "अरे सालन की गन्ध भी आ रही हैं।" सोचते हुये उसने आँखें खोलीं। उसे दिग्भ्रम-सा हुआ।

न किष्किन्धा थी, न मन्त्री थे। न जादूगर था। वीरसिंह अपने घर में ही था। उसको देखते ही रसोइया ने कहा-"खाना तैयार हो गया है। आप भोजन के लिए उठिये।"



बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा- "राजा, वीरसिंह को क्यों सजा दी गई थी? उसका जादूगर के प्रति व्यवहार इतना खराब क्यों था? क्या वह स्वभाव से नीच था इसलिए या राज्य ने उसे बदल दिया था? अगर तुमने जानबूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया तो तेरा सिर हजार टुकड़ों में टूट जायेगा।"

"वीरसिंह बिल्कुल नीच न था। अगर वह होता तो वह अपनी सारी जिन्दगी दूसरों के हित के लिए कुर्बान नहीं करता। ग़लती राज्य की भी नहीं है। जादूगर के आकर कहने तक वीरसिंह को किसी पद की भी इच्छा न थी। इसलिए यह अनुमान करना होगा कि उसको पदों के लिए मोह न था। इसलिए इस तरह का आदमी राजा बनने मात्र से बदल जायेगा, यह कहना ठीक नहीं होगा। अगर इस तरह का होता तो कभी का ही बदल गया होता। परन्तु वीरसिंह में परिवर्तन धीमे धीमे हुआ, यकायक न हुआ। इसका कारण उसके मन्त्री ही थे। जो आदमी स्वार्थी नहीं होता, यह प्राय: इर्द गिर्द मण्डरानेवाले मनुष्यों से प्रभावित होता है। किष्किन्धा के मन्त्री स्वार्थी और नीच थे। विपत्ति के समय जिस जादूगर ने उनको एक समर्थ राजा दिया था, उसको एक सौ मुहरें न देना चाहते थे। किष्किन्धा को चित्रकूट के ड़ाकुओं से बचाने का श्रेय जादूगर को ही था। पर उनमें इसके लिए कृतज्ञता भी न थी। वीरसिंह के हाथ से यदि राज्य निकल गया तो इससे उनको ही हानि हुई थी।" विक्रमार्क ने सोचकर कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जाकर बैठ गया।

(कल्पित)





अलीबाबा

(गताङ्क से आगे)

मोगियाना, बिना किसी सङ्कोच के तेल का पात्र लेकर आङ्गन में गई। वह जब पहले थैले के पास गई तो अन्दर से चोर ने दबी आवाज में पूछा-"क्या समय हो गया है?" मोगियाना पहले तो हैरान हुई। फिर उसने कहा-"अभी नहीं, जरा ठहरो।" एक के बाद सैंतीस थैलों में से उन्होंने यही पूछा। उसने भी वही जवाब दिया। अन्तिम थैले में से किसी ने कुछ न पूछा। उसमें से तेल लेकर वह अन्दर चली गई।

मोगियाना को मालूम हो गया कि उसके मालिक अलीबाबा ने अढ़तीस चोरों को आश्रय दिया था। और जो अपने को तेल का व्यापारी बताकर आया था, वह हो न हो उनका सरदार होगा। वह दीये में तेल डालकर, बड़ी कढ़ाई लेकर तेल के थैलों के पास गई। कढ़ाई में तेल भर कर उसे खूब गरम किया। उस जलते तेल को उसने थैलों में डाला। जो चोर जिस थैले में था वह उसमें जलकर मर गया। इसतरह साहसी मोगियाना ने सैंतीस चोरो को खतम कर दिया। वह घर के अन्दर गई। आग कम की, ताकि केवल शोरबा पकाया जा सके। दीये बुझाकर वह खिड़की के पास यह देखने के लिए खड़ी हो गई कि क्या होता है।

उसके दीये के बुझाने के बाद चोरों के सरदार ने, कहीं रोशनी और आहट न देखकर, बिस्तरे से उठकर खिड़की में से पत्थर फेंके। उनमें से कई कुछ

श्री सुमन कुमार ओशी

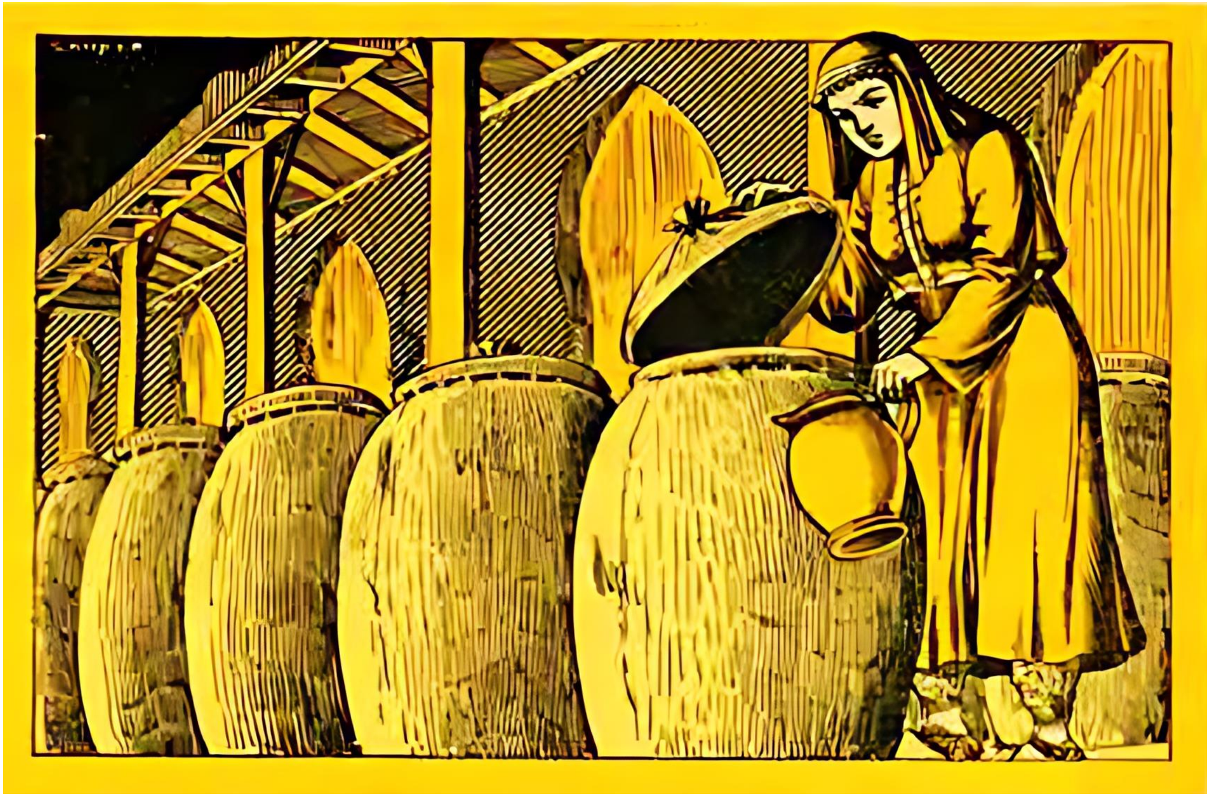
थैलों पर लगे भी। पर कोई चोर बाहर न आया।

चारों का सरदार घबराया। वह धीमे धीमे कदम रखता बाहर गया। पहले थैले का मुख खोलकर उसने पूछा- "तैयार हो न?" कोई जवाब न मिला। जले तेल की बू मात्र आई। सरदार जान गया कि उसके सब साथी मार दिये गये थे। चाल खुल गई है, यह सोचकर, चोरों का सरदार चार दीवारी फाँदकर भाग गया।

चोरों के सरदार के भाग जाने के बाद मोगियाना जाकर सो गई। वह यह सोच फूली न समाती थी कि उसने अपने मालिक की बहुत बड़ी विपत्ति से रक्षा की थी।

अलीबाबा को इस घटना के बारे में कुछ न मालूम था। वह सवेरा होने से पहले उठकर अपने गुलाम को साथ लेकर स्नानशाला में नहाने चला गया। जब वह वापिस आया तो उसने आङ्गन में खच्चरों को देखकर, मोगियाना को बुलाकर पूछा-"क्या यह तेल का व्यापारी अभी नहीं गया है?"

"मालिक, आप मेरे साथ आइये।" कहती हुई मोगियाना उसको उस जगह ले गई जहाँ तेल के थैले रखे हुये थे। उसने



उसको पहली थली देखने को कहा। अलीबाबा उसमें आदमी को देखकर हक्का-बक्का हो पीछे हटा।

"डरिये मत। वह आदमी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकता। वह मर गया है।" मोगियाना ने कहा।

"यह सब क्या है मोगियाना?" अलीबाबा ने कुतूहल के साथ पूछा।

आप जोर से मत बोलिये। बड़ा भारी रहस्य है। अड़ोस-पड़ोस के लोगों को नहीं मालूम होना चाहिये। इन थैलों को एक के बाद एक देखिये।" मोगियाना ने कहा।

जब सब थैलो को अलीबाबा ने देख लिया तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

"तेल का व्यापारी कहाँ है?" अलीबाबा ने पूछा।

"मैं जितना व्यापारी हूँ, उतना ही वह है। पहले आप शोरवा लीजिये। फिर जो कुछ हुआ है मैं सुनाऊँगी।" मोगियाना ने कहा।

उसने सफेद निशान जब से देखा था, तब से क्या क्या हुआ था, वह वह सब विस्तार के साथ सुना दिया।





सब सुनकर अलीबाबा ने कहा- "मोगियाना! यदि तुम मुझे न बचाती तो चोर जरूर मेरा सर्वनाश कर देते। तुमने प्राणदान दिया, इसका ऋण चुकाने से पहले मैं तुम्हें गुलामी से स्वतन्त्र करता हूँ। और बाकी ऋण चुकाने के लिए जरूर जल्दी कुछ न कुछ करूँगा।"

अलीबाबा का बगीचा काफी बड़ा था। उसके अन्त में ऊँचे ऊँचे, बड़े बड़े पेड़ थे। वहाँ अलीबाबा और अब्दुल्ला ने मिलकर एक बहुत बड़ा गढ़ा खोदा। उसमें चोरों को मय थैलों के गाड़ दिया। उसके बाद अलीबाबा ने खच्चरों को, एक एक करके पेंठ भिजवाया और वहाँ उन्हें बिकवा दिया।

अलीबाबा के घर से दौड़कर चोरों का सरदार जङ्गल में पहुँचा। उसका दिल दहल रहा था। क्योंकि उसके साथी सब मारे गये थे। इसलिये उसको गुफा काटती सी लगती थी। वहाँ वह थोड़ी देर ही ठहरा था कि वह डर गया और शहर वापस आ गया। वापस आते हुए उसने प्रतिज्ञा की कि वह अलीबाबा को मारकर अपना बदला चुकायेगा।

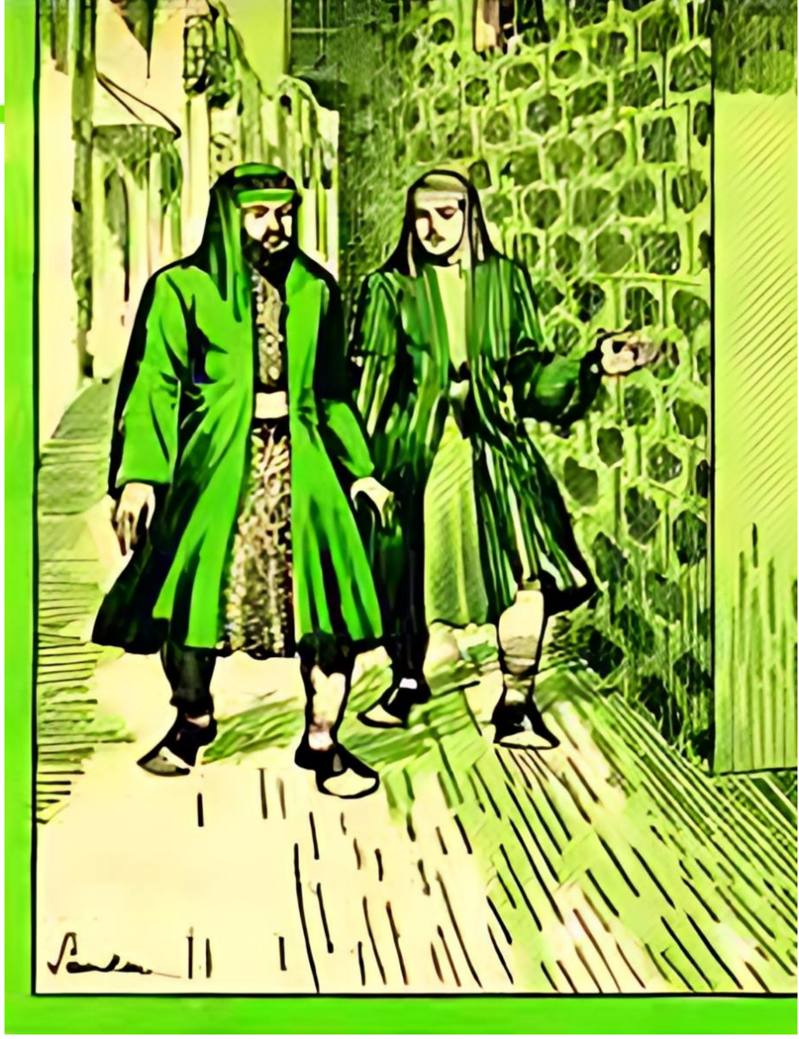
इसके लिए चोरों के सरदार ने कपड़े का व्यापारी का वेश धरा। कोजिया हुसेन अपना नाम रखा। उसने शहर में एक घर किराये पर लिया। सबकी नजर बचाकर उसने गुफा में से रेशमी कपड़े के थान लाकर वहाँ रखे। कासीम की दुकान के ठीक सामने, उसने दुकान ले ली। कासीम की दुकान तब अलीबाबा का बड़ा लड़का देख रहा था। व्यापारियों में, नये व्यापारियों का पुराने व्यापारियों की मान-मर्यादा करने की परम्परा है। इस परम्परा का चोरों के नेता ने भी पालन किया। उसने पहले अलीबाबा के लड़के से स्नेह

किया। दो चार दिनों बाद सामने की दुकान में अलीबाबा को देखकर, उसने तुरन्त उसे पहचान लिया। जब नये दोस्त ने यह बताया कि अलीबाबा उसका पिता था तो वह उसके प्रति और भी स्नेह दिखाने लगा। छोटे छोटे तोहफे देता। बात बात पर भोजन के लिए न्योता देता।

यह देख अलीबाबा के लड़के ने अपने पिता से कहा-"यह कोजिया हुसेन मेरी कितनी ही तरह से मर्यादा कर रहा है। अच्छा होगा यदि हम भी उसे अपने घर एक दिन दावत दें।"

"बेटा! कल शुक्रवार है। दुकानें बन्द होंगी। इसलिए उसे साथ लेते आना। भोजन तैयार रखने के लिए मैं मोगियाना से कह दूँगा।" अलीबाबा ने कहा। अलीबाबा के लड़के ने कोजिया हुसेन को अपने साथ अपने पिता के घर तक लाकर कहा-"यही मेरे पिता का घर है। हमारी मैत्री देखकर उन्होंने आपको भोजन पर आने के लिए बुलाया है।"

चोरों का सरदार तो यह चाहता ही था कि किसी बहाने अलीबाबा के घर में घुसे और उसका काम तमाम



कर दे। फिर भी वह पीछे हटा और न जाने की जिद करने लगा। परन्तु इस बीच नौकर ने आकर दरवाजा खोला। अलीबाबा का लड़का उसको जबर्दस्ती अन्दर ले गया। अलीबाबा ने कोजिया हुसेन का खूब स्वागत दिया। "लड़का अभी छोटा है। उसे दुनियादारी नहीं आती जाती। आप जैसे लोगों से वह बहुत कुछ सीख सकता है।" उसने चोरों के सरदार से कहा।

"दुनियादारी भले ही कम जानता हो, पर बुद्धि में यह बड़ों के भी कान काटता है।" कोजिया हुसेन ने कहा।

कुछ देर तक बातचीत करने के बाद, कोजिया हुमेन ने जाने की इजाजत माँगी। अलीबाबा ने कहा- "यह क्या? आपको मेरे साथ बैठकर खाना खाना ही होगा। आप हमारे नजदीकी दोस्त हैं। हम लोगों का रूखा सूखा ही खाना है, पर वह आपको बिना खिलाये नहीं भेजेंगे।"

"मैं ऐसी चीजों को छूता भी नहीं जिनमें नमक पड़ा हुआ होता है। इसलिए जबर्दस्ती न कीजिये। मुझे जाने दीजिये।" कोजिया हुसेन ने कहा।

"मुझे भी नमक पसन्द नहीं है। आप जैसा भोजन चाहेंगे, वैसा ही खिलायेंगे, ठहरिये।" कहते हुए अलीबाबा ने जाकर मोगियाना से कहा-"मोगियाना! हमारे घर एक अतिथि आया हुआ है। वह नमक नहीं खाता। इसलिए उसके लिए बिना नमक का भोजन तैयार करो।"

मोगियाना ने पूछा-"कौन है यह अजीब आदमी? वह खाना बनने से पहले आपका खाना ठण्डा पड़ जायेगा।"

"बिगड़ मत मोगियाना! वह हमारा मित्र है। जो मैं कहूँ, कर।" अलीबाबा ने कहा।



मोगियाना ने बिना नमक का भोजन बनाया। जब अब्दुल्ला परोस रहा था तो वह भी परोसने आई। कोजिया हुसेन को देखते ही वह पहचान गई कि वह चोरों का सरदार था। यही नहीं उसने उसके अङ्गरखे में छुरी की मूठ भी देखी। परोसने के बाद, नृत्य के लिए वेष पहनकर कमर में एक छुरी रखकर मोगियाना ने अब्दुल्ला को कञ्जीरा लाने के लिए कहा। उसके आने तक, अलीबाबा, उसके लड़के और चोरों के सरदार ने भोजन समाप्त न किया था।

"आ मोगियाना! तू अपना नृत्य अतिथि को दिखा।" अलीबाबा ने कहा।

वह बहुत देर छुरी लेकर नाचती रही। उसने नृत्य के साथ कई बार यह दिखाया, जैसे वह अपने आप अपने को छुरी से भोक रही हो! नृत्य के बाद अब्दुल्ला को साथ लेकर वह इनाम के लिए आई। अलीबाबा ने कञ्जीरा में एक दीनार रखी। अलीबाबा के लड़के ने एक और दीनार रखी। अब्दुल्ला कञ्जीरा लेकर चोरों के सरदार के पास गया। चोरों के सरदार ने पैसे के लिए जेब में हाथ



रखा। ठीक उसी समय मोगियाना ने चोरों के सरदार के सीने में छुरी भोंक दी।

अलीबाबा झट उठा। उसने पूछा- "क्या किया तुमने मोगियाना?"

"आप जल्दी न कीजिये। यह कपड़े का ही व्यापारी नहीं है। यह तेल का भी व्यापारी है। यह ही चोरों का सरदार है। इसकी कमर में छुरी देखिये। यह तो आपको मारने के लिए लाया था। जब इसने यह कहा था कि वह आपका नमक न खायेगा, तभी मुझे सन्देह हो गया था। इसलिए परोसने के बहाने में आई। और मैंने उसे पहचान लिया।" मोगियाना ने कहा।

"मोगियाना। मैं सचमुच तुम्हारा ऋण न चुका पाऊँगा। मैंने पहले ही तुझे स्वतन्त्र कर दिया था। अब में तुझे बहू बनाता हूँ।"अलीबाबा ने कहा।

अलीबाबा के लड़के ने सहर्ष उसके साथ विवाह करना स्वीकार किया।

जैसे और चोरों को गाड़ दिया था वैसे ही उन्होंने चोरों के सरदार को भी गाड़ दिया। अब सिवाय अलीबाबा के कोई भी गुफा का रहस्य न जानता था। परन्तु इस सन्देह में कि अभी चोर और जीवित थे अलीबाबा एक साल उस गुफा की ओर न गया।

जब उसने साल भर देखा कि उसको कोई हानि नहीं पहुँचा रहा था तो वह एक दिन गुफा में गया। वहाँ साल भर से किसी ने पैर न रखा था।

थोड़े दिनों बाद अलीबाबा ने गुफा का रहस्य अपने लड़के को भी बता दिया। उसके बाद कई पीढ़यों तक पुत्र पिताओं से उस गुफा के बारे में जानते और वहाँ से सम्पदा लेकर सुख से रहते। (समाप्त)



चुडैल

एक दिन दो आदमी मरकर चित्रगुप्त के सामने पहुँचे। चित्रगुप्त ने पहले आदमी से पूछा-"तुमने क्या क्या पाप किये हैं?"

"क्यों नहीं किये? छोटे छोटे पाप बहुत से किये हैं। पापों का तो दण्ड मिलेगा ही? बताइये कितने दिन नरक में रहना होगा?" उस आदमी ने पूछा।

चित्रगुप्त ने हँसकर कहा-"तुम चुडैल कामाक्षी के पति हो न? जो नरक तुम्हें भुगतना था वह तुमने भूमि पर भुगत ही लिया है। अब तुम स्वर्ग जा सकते हो।

देवता आकर उसे स्वर्ग ले गये। फिर दूसरे आदमी ने चित्रगुप्त से कहा-"जब आपने एक ऐसे आदमी को स्वर्ग दिया है, जिसने एक चुडैल के साथ गृहस्थी की थी, तब मुझे क्या देंगे? मैंने एक के बाद एक करके तीन चुडैलों से शादी की। तीनों काँटों की झाड़ियाँ-सी थी।" चित्रगुप्त ने यम के सैनिकों को बुलाकर कहा-"इसको नरक ले जाओ।"

"महाराज यह अन्याय है।" उस आदमी ने कहा।

"अरे, स्वर्ग अभागों के लिए है, न कि बेअक्लों के लिए।" चित्रगुप्त ने जवाब दिया।





[६]

[राजा ने वचन दिया था कि तीन महीने बाद यह अपनी लड़की की शादी अलादीन से कर देगा। पर उसने अपना वचन न निभाया। मन्त्री की सलाह पर, तीन महीनों से पहले ही उसने राजकुमारी का विवाह मन्त्री के लड़के से कर दिया। यह जानकर अलादीन ने भूत की सहायता से विवाह रद्द करवा दिया। शादी की खुशियाँ भी बन्द करवा दी।]

यह सबको मालूम हो गया कि राजकुमारी बुदूर और मन्त्री के लड़के की शादी रद्द कर दी गयी थी और मन्त्री के लड़के को कहीं दूर देश भेज दिया गया था। यह सुन अलादीन को बड़ी खुशी हुई। उसने अपने दीप की प्रशंसा की। उसे यह जानकर और भी सन्तोष हुआ कि सिवाय उसके कोई यह न जानता था कि वह विवाह कैसे रद्द हुआ था।

जल्दी ही राजा की दी हुई अवधि पूरी हो गई। अलादीन ने अपनी माँ को राजा के दर्शन के लिए जाने को कहा। वह अपनी सब से अच्छी पोषाक पहनकर राजमहल में गई। उसने दरबार में पैर रखा ही था कि राजा ने उसे पहचान लिया। उसने अपने मन्त्री से कहा-"अलादीन की माँ आ रही है। क्योंकि अवधि समाप्त हो गई है, शायद

राजकुमारी की शादी वह अपने लड़के से करने के लिए कहे।"

मन्त्री अभी तक अपना अपमान भूल न पाया था। उसने राजा से कहा- "महाराज, यह अवश्य है कि आप जैसे व्यक्तियों को वचन देकर मुकरना नहीं चाहिए। पर यह भी आवश्यक है कि होनेवाले दामाद के बारे में कुछ न कुछ मालूम किया जाये। क्या किसी अजनवी को कोई अपनी लड़की देता है? अलादीन के बारे में मैं जानता हूँ, आप कुछ नहीं जानते। इस अलादीन का पिता एक गरीब दर्जी था। गरीबी के कारण ही चल बसा। उसका लड़का अमीर है, यह कैसे अनुमान किया जा सकता है?"

"अगर भगवान की कृपा हो तो कोई भी धनवान हो सकता है।" राजा ने कहा।

"अगर ऐसा हुआ है तो हमें सूचना मिलनी चाहिए थी। मेरी सलाह यह है कि अलादीन से आप खूब दहेज माँगिये। अगर वह उतना दहेज दे सका तो हम उसके साथ राजकुमारी की शादी खुशी खुशी कर सकते हैं।" मन्त्री ने कहा।



"तेरी सलाह बिल्कुल ठीक है। उस बुढ़िया को सामने आने के लिए कहो।" राजा ने कहा।

अलादीन की माँ ने राजा के समीप आकर प्रणाम किया।

"हम चाहते हैं कि आपको विदित हो कि हम अपना वचन नहीं भूले हैं। परन्तु पहले हमने दहेज आदि के बारे में बातचीत न की थी। यह आपको नहीं भुलाना चाहिए कि दुल्हन राजकुमारी है, बड़े घर की है। दहेज में यह होना चाहिए, चालीस खालिस सोने के थाल, रत्नों से भरे



हुए होने चाहिए। वे रत्न भी वैसे होने चाहिए जैसे पहले आपने दिये थे। इन चालीस थालों को अप्सरा जैसी दासियों को राजमहल तक उठाकर लाना होगा। उनके साथ चालीस काले गुलाम पहरे पर आने चाहिए। जब ये भेंट हमारे सामने रख दी जायेंगी तब विवाह निश्चित कर दिया जायेगा। क्योंकि पहले ही आपके लड़के ने मुझे उपहार दिये थे इसलिए मैं इनसे अधिक माँगना नहीं चाहता हूँ।" राजा ने कहा।

यह माँग सुनते ही अलादीन की माँ का दिल थम सा गया। वह राजा को प्रणाम कर बिना कोई उत्तर दिये चली गई। उसके घर में घुसते ही उसने अलादीन से कहा-"मैंने पहले ही कहा था कि हमें इस राजकुमारी के लिए यों नहीं तड़पना चाहिए।" उसने राजा की कही बातें सुनाकर कहा-"अगर वे सोने-रत्न माँगते तो मैं मान भी जाती। क्योंकि तुझपर पागलपन चढ़ा हुआ है इसलिए उस गुफा में जाकर पेड़ों पर लगे रत्नों को ला सकता है। पर चालीस दासियों को और चालीस गुलामों को क्या हम कहीं से ला सकते हैं? बेटा, भला तुम कहाँ से लाओगे? उस मनहूस मन्त्री ने कान में कुछ कह दिया था। इसीलिये राजा ने इतना माँगा। पागलपन छोड़ दो, नहीं तो दलदल में फँसोगे। कहे देती हूँ।"

अलादीन यह सुनकर हँसा। "माँ, जब तू आयी थी तभी मैं समझ गई थी कि कोई अशुभ समाचार लाई हो। पर अब मुझे पता लगा कि तू अच्छा ही समाचार लाई है। जो कुछ मैं दे सकता हूँ, राजा ने जितना माँगा है उसमें क्या है? इसलिये तुम अपने ऊँटपटाङ्ग सन्देहों

को छोड़ दो और खाना तैयार करो। मुझे बड़ी भूख लग रही है। राजा को जो कुछ चाहिये, यह सब में देख लूँगा।" अलादीन ने अपनी माँ से कहा।

माँ के अपने काम पर चले जाने के बाद, अलादीन ने अपना कमरा बन्दकर दीप निकालकर रगड़ा। तुरन्त भूत प्रत्यक्ष हुआ उसने पूछा-"क्या आज्ञा है?"

अलादीन ने राजा की माँग के बारे में बताकर आज्ञा दी कि चालीस सोने के थालों को रत्नों से भरकर वह लाये और साथ ही चालीस दासियों और चालीस गुलामों को लाये।

भूत अदृश्य हो गया और तुरन्त अलादीन की माँगी हुई चीजों को लेकर हाजिर हुआ। भूत ने अलादीन को दीवार के सहारे खड़े चालीस दासियों को रत्नों से भरे चालीस सोने के थालों को लिए दिखाये। चालीस गुलाम भी वहाँ थे। सब कुछ देख दाख कर अलादीन ने भूत को भेज दिया।

ठीक इसी समय अलादीन की माँ खाना लेकर आई। उसने सब जगह गुलाम देखे तो सोचा कि राजा ने



उसके लड़के को दण्ड देने के लिए सिपाही भेजे हैं। परन्तु इतने में अलादीन ने माँ के पास आकर कहा-"माँ, अब फिर तुझे जाना होगा। इन गुलामों को और इन उपहारों को लेकर राजा के पास जाओ।"

वह अब सच जान गई। वह गुलामों को साथ लेकर निकल पड़ी। इस अजीब जलूस को देखने के लिये लोग जमा हो गये। अलादीन की माँ जब राजमहल पहुँची तो उनके पीछे इतने लोग आ रहे थे कि गली सड़कें सब भर गई थीं। क्या होगा किसी को न मालूम था। इसलिये

लोग जिसके मन में जो कुछ आता वह कह रहे थे। अजीब अजीब कहानियाँ गढ़ रहे थे। खूबसूरत स्त्रियाँ उनके सिर पर सोने के थाल और उनपर रखे रत्न, वे सब लोग देख ही रहे थे। वह वैभव देख कर कई ने सोचा कि कोई बड़ा महाराजा आ रहा था।

जब दासियाँ राजमहल के बड़े द्वार पर पहुँची तो द्वारपालकों का उन्हें रोकना तो अलग, वे भय के कारण एक तरफ हट गये। द्वारपालकों के सरदार ने नीग्रो गुलाम को देखकर समझा कि वह कोई नीग्रो राजा होगा। उसने उसे सलाम किया। नीग्रो ने हँसकर कहा-"मैं गुलाम हूँ। मेरा मालिक पीछे आनेवाला है।"

राजा तब दरबार में किसी मुख्य विषय पर विचार-परामर्श कर रहा था। गुलामों को देखते ही उसने उन्हें अन्दर भेजने के लिए कहा। गुलाम अर्धचन्द्राकार रूप में सिंहासन के सामने खड़े हो गये। थालों को उतारने में गुलामों ने दासियों की मदद की। फिर अस्सी गुलाम राजा के सामने साष्टाङ्ग कर खड़े हो गये।



इसके बाद, अलादीन की माँ ने राजा को प्रणाम करके कहा-"महाराज! आपके सेवक अलादीन ने राजकुमारी के लिए ये उपहार भेजे हैं। इन्हें स्वीकार कीजिये। मेरे लड़के ने मुझे आपसे निवेदन करने के लिए कहा है कि आपने राजकुमारी के योग्य उपहार नहीं माँगे हैं। परन्तु यदि आज अपने ये भेंट स्वीकार कर ली तो भविष्य में इनसे भी अच्छे उपहार वह दे सकेगा।"

राजा की अक्ल जाती रही। वह सिंहासन से उचक उचक कर रत्नों की ओर गुलामों की ओर भौचक्का होकर देखता रहा। उसके मुख से बात तक न निकली। उसने अलादीन की माँ की बातें न सुनी। आखिर उसने मन्त्री की ओर मुड़कर कहा-"मन्त्री, इस सम्पत्ति के सामने हमारी सम्पत्ति तो मशाल के सामने चिराग जितनी है। हमने अभी माँगी भी न थी कि उसने उपहार भेज दिये, हम उसके बारे में क्या सोच सकते हैं? इस वैभव की तुलना में राजकुमारी नाचीज़-सी है।"

मन्त्री राजा की बातों का विरोध न कर सका। फिर भी उसने कहा-"ऐसा न कहिये महाराज, चाहे कितनी





भी इन रत्नों की कीमत हो, राजकुमारी की कीमत उससे कहीं अधिक है।"

"कभी नहीं! और तो और यदि मैंने लड़की की शादी अलादीन से कर दी तो तुम भी न कह पाओगे कि बिना आगे पीछे देखे विवाह कर दिया है।" राजा ने कहा। उसने अपने दरबारियों की ओर इस तरह देखा जैसे कोई प्रश्न पूछ रहा हो। उन्होंने अपने सिर झुकाकर सूचित किया कि वे राजा से सहमत थे।

राजा ने तब कोई हिचक न दिखाई। उसे यह सन्देह भी न रहा कि अलादीन उसकी लड़की के लिए किस प्रकार का पति होगा। उसने अलादीन की माँ की ओर मुड़कर कहा-"आज से आपका लड़का मेरा समकक्षी है, मेरा बन्धु है। उसका गौरव भी मेरे गौरव के बराबर है। मैं तो इस इन्तज़ार में हूँ कि मैं कब उसे गले लगाता हूँ और कब उसके साथ अपनी लड़की की शादी विधि के अनुसार करता हूँ।"

अलादीन की माँ राजा से आज्ञा लेकर भागी भागी घर गई। उसने अलादीन से जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

अलादीन को भी बड़ी खुशी हुई, क्योंकि बहुत दौड़-धूप के बाद वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ था। परन्तु उसने खुशी व्यक्त न की। "माँ, आज परमेश्वर की कृपा से और तेरे आशीर्वाद से तेरे प्रयत्न से ही यह काम हुआ है।" उसने इस तरह माता के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। वह राजा के दर्शन करने जाने के लिए तैयार होने लगा।

वह अकेला कमरे में गया। उसने एक बार और दीप के भूत को बुलाया। भूत के आते ही उसने कहा-"भूत, मुझे

अभी अच्छी तरह नहलाओ और ऐसी पोशाकें लाकर दो, जो किसी राजा के पास न हो।"

भूत उसे अपने कन्धों पर बिठाकर एक क्षण में, एक स्नानशाला में ले गया। उस तरह की सुन्दर स्नानशाला संसार में कहीं न थी। वह सङ्गमरमर की बनी हुई थी। उसमें स्नान करने के स्थल गुलाबी रङ्ग और सफेद मोती के पत्थरों से बने हुए थे। उनके चारों ओर रत्न थे। यहाँ कई भूतों ने अलादीन को, मालिश करके गुलाब जल से स्नान करवाया। इस स्नान के कारण उसका रङ्ग गुलाब के रङ्ग की तरह निखर आया।

फिर उसे उन्होंने ऐसी अच्छी अच्छी पोषाक लाकर दीं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। उनको पहनने से ऐसा लगता था, जैसे स्वर्ग से कोई राजकुमार आया हो। भूत उसे घर वापिस ले गया।

अलादीन ने तब भूत से कहा-"अब मुझे अच्छी नस्ल का घोड़ा चाहिए। बैसा घोड़ा राजा के पास भी नहीं होना चाहिए। मुझे अड़तालीस गुलाम चाहिए। उन सब की अच्छी वरदी होनी चाहिए। उनमें



से आधे मेरे सामने और आधे मेरे पीछे, दो दो की कतार में चलेंगे। मेरी माँ के लिए बारह बहुत सुन्दर दासियाँ चाहिए। बारह आदमियों को बारह रङ्ग के कपड़े, राजकुमारी के लिए लाने होंगे। मेरे गुलामों में हरेक के पास पाँच पाँच हज़ार दीनारें मेरे खर्च के लिए दो। ये चीजें ही मुझे इस समय चाहिए।"

जो चीजें अलादीन ने माँगी थीं, लाकर दी गई। वह घोड़े पर सवार हो गया। उससे पहले उसने कभी घोड़े पर सवारी न की थी, तो भी उसे घोड़े पर चढ़ना नया न लगा। उसके चलते ही आगे पीछे खड़े गुलाम भी चले।

जब सड़क पर यह जा रहा था तो उसके पीछे भी लोग जमा हो गये। छतों पर खड़े होकर, खिड़कियों से झाँक झाँककर लोग वह जुलूस देखने लगे। अलादीन की आज्ञा पर गुलाम लोगों पर सोने की वर्षा करने लगे।

राजा को उसके आने की खबर पहले ही मिल गई थी। वह उसका स्वागत करने के लिए प्रतीक्षा कर रहा था। अलादीन को देखते ही उसे लगा जैसे उसकी कीमती पोषाकें, आभूषण उसे काट-से रहे हों। उसने उसको गले लगाया, दरबारियों ने हर्ष ध्वनि की। शहनाइयाँ बजाई गईं।

राजा अलादीन को अपने साथ चलाकर अतिथि भवन ले गया। अपने साथ ही बिठाया। "अलादीन! मुझे इसका अफसोस

है कि मैंने तेरी शादी के लिए तीन महीनों की अवधि माँगी। संसार में कोई ऐसा राजा न होगा जो तुझे दामाद बनाने के लिए उतावला न हो।"

(अभी और है)





शाप अपशब्द

एक गाँव में एक महाजन रहा करता था। वह बड़ा पापी था। उसे भले ही देवता न दिखाई देते हों, भूत ज़रूर दिखाई देते थे। भूतों को देख कर भलेमानस डर जाते हैं। पर पापियों को भूतों का डर नहीं होता।

इस महाजन ने उस गाँव की एक गरीब बुढ़िया को कर्ज दिया था। उस बुढ़िया के छः बचे थे। उसका पति यकायक मर गया था। उसके पास बच्चों को माण्ड पिलाने के लिए भी पैसा न था। इसलिये उसने अपना मकान गिरवी रखकर, दो साल पहले महाजन से तीस रुपये उधार लिये। अगले साल न केवल वह पिछला कर्ज ही न चुका पाई परन्तु पन्द्रह रुपये और उधार ले गई। महाजन ने उधार पर सूद लगाया। सूद पर सूद और पूरे सौ रुपये का हिसाब तैयार कर दिया।

गरीब बुढ़िया का घर सौ रुपये से अधिक का था। फिर भी व्यापारी ने उस मकान को हथियाने की सोचकर एक दिन सवेरे गली में पैर रखा।

ठीक उसी समय, एक भूत घर के सामने से जाता हुआ उस व्यापारी को दिखाई दिया।

"क्या बात है? क्या आज हमारे गाँव में किसी पर शामत आई है?" महाजन ने भूत से पूछा।

भूत ने हँसकर कहा-"तुम्हारे गाँव आये बहुत दिन हो गये हैं। शायद खाने को कुछ मिल जाये, यह सोचकर निकल पड़ा हूँ। तुम कहाँ तक जा रहे हो?"

उसने भूत को बताया कि वह गरीब बुढ़िया का घर लेने जा रहा है। उसने

सच्चिदानन्द

कर्ज और कर्ज पर चढ़े सूद के बारे में भी बताया।

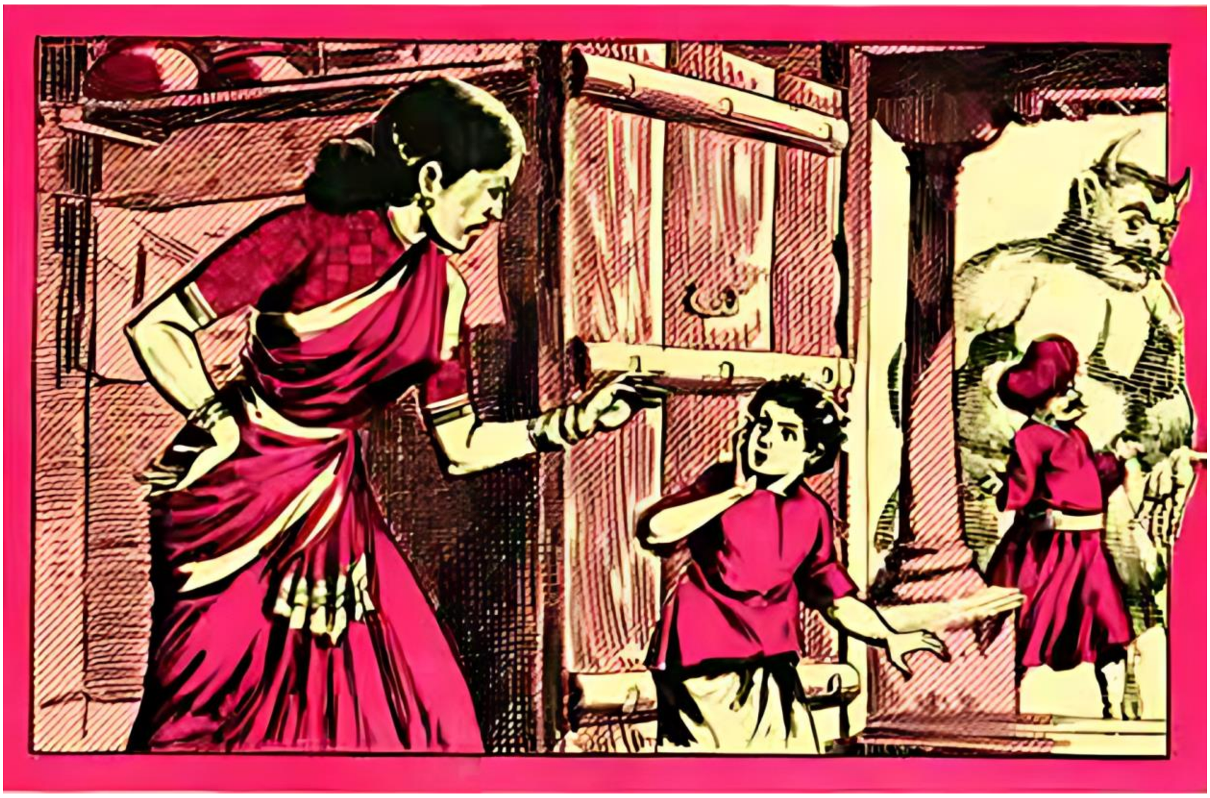
"अरे भाई, दो साल भी नहीं हुये कि मूल से अधिक व्याज हो गया है। तुम लोग हमें गालियां देते हों, पर तुम में कई ऐसे हैं जो हमें भी मात देते हैं।" भूत ने कहा।

महाजन को यह सुनकर गुस्सा आना तो अलग, बहुत खुशी हुई।

वे बातें करते करते थोड़ी दूर गये थे कि एक झोपड़ी में कोई स्त्री अपने लड़के पर गुस्सा कर रही थी। "तुझे भूत निगल ले। कितनी बार कहा कि किवाड़ अच्छी तरह बन्द करो। पर तुम्हें कुछ ख्याल नहीं.... कम्बख्त बिल्ली सारा मक्खन चटकर गई है।"

"यह लो तुम्हारा आहार। वह अपने लड़के को तुम्हें खाने को सौंप रही है।" महाजन ने कहा।

भूत ने हँसकर कहा-"वह तो यूँहि कह रही है। वह सचमुच अपने लड़के को मुझे नहीं देना चाहती। मुझे इतना अनुभव है, क्या मैं इतना भी नहीं जानता?"



और थोड़ी दूर जाने पर पति-पत्नी आपस में डाँट डपट रहे थे। जब उन्होंने एक दूसरे को कहा-"तुझे भूत निगले।" तब महाजन ने भूत की ओर मुड़कर कहा-"यह तो और भी अच्छा मौका है। एक चोट में दो को निगल सकते हो।"

भूत ने एक तरफ सिर मोड़कर कहा-"वे गालियाँ हैं, शाप नहीं। चलो हम अपने रास्ते चलें।"

कुछ दूर चलने के बाद, वे गरीब बुढ़िया के घर पहुँचे। महाजन ने घर का किवाड़ खटखटाया। गरीब बुढ़िया ने आकर दरवाजा खोला। व्यापारी को देखकर पूछा-"क्यों भाई, क्या बात है?"

"और कुछ नहीं सूद मूल सब मिल मिलाकर अब सौ रुपये का हिसाब बनता है। इस घर को तुमने मेरे पास गिरवी रखा है। इन दो सालों में तुमने एक दमड़ी भी न दी। तुम भी भला कहाँ से दोगी? अब घर की कीमत और कर्ज बराबर हो गये हैं। इसलिये तुम अपना मकान खाली कर दो और कर्ज पूरा चुका दो। यही बात कहने के लिए आया था।" महाजन ने कहा।

बुढ़िया को बहुत गुस्सा आया। उसने कहा-"तुझे भूत निगले। पैतालीस रुपये देकर घर हथियाना चाहते हो? देख तेरी खबर लेती हूँ।" कहती वह अन्दर गई।

वह पीछे मुड़ी ही थी कि पिशाच झट महाजन को निगल गया और चला गया। जब बुढ़िया व्यापारी की पूजा करने के लिए झाड़ू बगैरह लाई तो वहाँ कोई न था। सारी गली सुनसान पड़ी थी। "अरे इतने में कहाँ गायब हो गया।" कहकर बुढ़िया ने घर के किवाड़ बन्द कर दिये।





[८]

[रूपधर और उसके अनुयायियों ने अपनी शपथ न रखी। जब रूपधर वहाँ न था, मायाबी के उकसाने पर उन्होंने सूर्य भगवान के पशुओं को पकड़कर खा लिया। उसका परिणाम भी जल्द स्पष्ट हो गया। समुद्र में रूपधर की नौका डूब गई। सब समुद्र में समा गये। केवल रूपधर हो जैसे तैसे किनारे पर लगा।]

उस देश के राजा का नाम महामेधी था। उसके एक लड़की थी, जिसका नाम वारुणी था। सवेरे के समय उसे एक आश्चर्यजनक सपना आया। सपने में उसकी एक सहेली ने पूछा-"क्यों वारुणी? तू इतनी आलसी क्यों हो गई है। कितने ही मैले कपड़े धोने हैं न? कल शादी में क्या मैले कपड़े पहनोगी? सब क्या सोचेंगे? चल, सवेरे होते ही कपड़े धोने चलेंगी। मैं भी तेरी मदद के लिए आऊँगी। अपने पिता से एक गाड़ी तैयार रखने के लिए कह। धोबी घाट तक पैदल जाना बहुत मुश्किल है।"

वारुणी यकायक उठ बैठी और उसने सूर्योदय देखा। जो सपने में देखा था, उसने वह करने का निश्चय किया। उसने अपनी माँ से कहा कि वह कपड़े धोने जायेगी। फिर वह पिता के पास गई। वह



सरदारों की सभा में जाने के लिए तैयार हो रहा था।

"पिताजी! मुझे एक बड़ी गाड़ी चाहिये। आज मैं नदी में जाकर अपने सब अच्छे कपड़े धोऊँगी। बहुत मैले कपड़े इकट्ठे हो गये हैं। घर में बहुत से लोग हैं। और सब के सब नये कपड़े चाहते हैं।"

महामेधी ने कहा-"इसमें क्या रखा है बेटी? नौकरों से कह कर जितनी बड़ी गाड़ी चाहो उतनी बड़ी ले लो।"

तुरन्त एक गाड़ी तैयार की गई, खच्चर जोते गये। वारुणी और दासियों के लिए पर्याप्त भोजन साथ लिया गया। वारुणी गाड़ी पर चढ़कर चाबुक लेकर, खुद गाड़ी हाँकने लगी। दासियाँ गाड़ी के जल्दी जल्दी पीछे चलने लगी।

थोड़ी देर में वे नदी के धोबीघाट पर पहुँचे। खच्चरों को नदी किनारे चरने छोड़ दिया गया। फिर आपस में होड़ करती वे मैले कपड़े धोने लगी। धोने का काम खतम होने पर वे समुद्र में स्नान करने गई। फिर नदी किनारे आकर, कपड़े सुखाकर उन्होंने भोजन किया। उसके बाद गेन्द का खेल खेला। खेलते खेलते गेन्द नदी में जा गिरी। सब एक साथ जोर से चिल्लाई।

उनका चिल्लाना सुन रूपधर की नींद टूटी। वह झाड़ियों में से बाहर आया। उसने वारुणी और दासियों को देखा। उसको धूल धूसरित देखकर वारुणी और उसकी दासियों डर गई। वे इधर उधर भाग कर, झाड़ झंखाड़ों के पीछे छुप गई। केवल वारुणी ही निर्भय हो उसको देखकर खड़ी रही।

रूपधर ने थोड़ी दूरी पर खड़े होकर कहा-"सुन्दरी, तुम स्त्री हो या अप्सरा

हो, मुझे नहीं मालूम। कद और सौन्दर्य से तो अप्सरा ही लगती हो। अगर तु स्त्री ही है तो सचमुच तेरे माता-पिता बहुत भाग्यशाली हैं। तेरी बहनें कितनी ही भाग्यशाली हैं। और तुझसे विवाह करने वाला करना भाग्यशाली है। मैं बहुत देशों में घुमा हूँ; पर तुम जैसी सुन्दरी मैंने कहीं न देखी। अब में बड़ी दीन अवस्था में हूँ। बीस दिन समुद्र में हर तरह की मुसीबतें झेलता रहा, कल ही किनारे लगा हूँ। मेरे लिए यह देश नया है। अगर कोई मेरी रक्षा कर सकता है, तो तू ही कर सकती है। मेरी हालत देखकर जरा दया कर और मुझे पहनने के लिए कपड़ा दे और अपने नगर का रास्ता दिखा। अगर तूने इतनी मेरी मदद की तो तेरा पुण्य बेकार न जायेगा।"

"तुम बुद्धिमान नज़र आते हो। सुख तो देवी-देवता ही दिया करते हैं। पर चूंकि तू हमारे देश में है, इसलिए मैं आश्वासन देती हूँ कि तुझे खाने पीने की कोई कमी न होगी। मैं अपने नगर का मार्ग भी बताऊँगी। यह फेंयासिया देश है।



महामेधी इस देश का राजा है। में उसकी लड़की हूँ।" वारुणी ने कहा।

फिर उसने अपनी दासियों को बुलाकर कहा-"क्यों यों पशुओं की तरह चिककर भाग रही हो? क्या यह तुम्हें खा बैठेगा? यह विचारा बेघरबार है। इसको खाने के लिए कुछ दो। नदी में स्नान कराओ। बहुत भूखा प्यासा मालूम होता है।"

दासियों ने रूपधर को स्नान करने का घाट दिखाया। स्नान के बाद, शरीर पर लगाने के लिए तैल, पहनने के लिए कपड़े



इस बीच, जो कुछ होना था, उस बारे में वारुणी ने खूब सोचा। वह रूपवती थी, अभी कारी थी। उस देश में कितने ही उसके साथ शादी करने के लिए तैयार थे। पर उन सबको उसने पहले ही अस्वीकार कर दिया था। उस हालत में, उसके लिए रूपधर को साथ नगर ले जाना ठीक न था। सब कोई यही कहेंगे कि किसी ऐरा गैरा को पकड़कर राजकुमारी ने शादी कर ली है। इसलिये इस अजनबी को अतिथि बनाकर ले जाने की अपेक्षा यह अच्छा होगा कि वह स्वयं आकर आतिथ्य आश्रय माँगे, उसने यह निश्चय कर लिया।

जब दासियाँ सूखे कपड़े इकट्ठे कर रही थी तब वारुणी ने रूपधर से यों कहा-"आओ, अब हम चलें। तू औरों के साथ मेरी गाड़ी के पीछे चल कर आ। इस तरह किले की दीवारों तक आ सकते हो। परन्तु मेरे साथ नगर में न घुसो। हर कोई बेसिर पैर की उड़ायेगा। नगर के बाहर एक बगीचा है। वहीं तुम आराम करो। मेरे घर जाने के थोड़ी देर बाद सीधे मेरे घर चले आना। मेरा घर पता लगाने में कोई कठिनाई न होगी।

दिये। रूपधर ने नदी में उतर कर, शरीर पर जमे नमक और मिट्टी को धोकर हटाया। तेल की मालिश की, राजकुमारी के दिये हुए कपड़े पहने और चमचमाता हुआ उधर आया। वारुणी को पहले वह बहुत बदसूरत लगा था; अब वह कोई देवता-सा लगता था। उसने सोचा, अच्छा होगा यदि उसे वैसा पति मिले। उसने चाहा कि हमेशा वह उसी देश में रह जाये। वह कहीं और न जाये।

दासियों ने उसको भोजन परोसा। उसे भोजन किये बहुत दिन हो गये थे।

बच्चा भी बता देगा। हमारा घर मालूम होने पर सीधे अन्दर आ जाना। वहाँ तुम्हें मेरे माता-पिता दिखाई देंगे। तुम निस्सङ्कोच मेरी माँ के पास जाओ और सविनय आतिथ्य माँगो। अगर तुम्हारी बात करने का लहजा उन्हें जँचा तो सब कुछ तुम्हारे अनुकूल होगा। हमारे राजमहल में उन्ही की ही चलती है। अगर उन्होंने चाहा तो वे तुम्हारी बहुत मदद कर सकती हैं। समझे?"

वारुणी ने गाड़ी में चढ़कर खच्चरों को इशारा किया। सब चल पड़े। बगीचे के पास पहुँचने के बाद रूपधर वहीं रह गया। बाकी आगे चल दिये। तब सूर्यास्त का समय हो चुका था। रूपधर ने बहुत देर तक अपनी आराध्य देवी बुद्धिमति की प्रार्थना की। कुछ सोच विचारने के बाद यह राजमहल की ओर जल्दी जल्दी कदम बढ़ाता चल पड़ा।

इस बीच वारुणी घर पहुँच चुकी थी। उसके पाँचों भाई धोये हुए कपड़ों को अन्दर ले गये। वारुणी को मालूम हुआ कि तभी रसोई बनानी शुरू की गई थी। वह भी अन्दर गई।



रूपधर ने नगर में प्रवेश किया। परन्तु अन्धेरे में न किसी ने उसे देखा, न किसीने उससे बातचीत ही की। उसे एक लड़की पानी का घड़ा लिये दिखाई दी। रूपधर ने उससे कहा-"मैं परदेशी हूँ। क्या तुम महामेधी राजा के घर का रास्ता दिखा सकोगी?"

"हाँ, मैं दिखाऊँगी, आओ। यहाँ तुम्हें लोगों से इस तरह बातचीत नहीं करनी चाहिए। यहाँ के निवासी परदेशियों पर बड़ा सन्देह करते हैं। इसलिए न किसी की ओर देखो, न बात करो, मेरे पीछे



चले आओ।" उस लड़की ने दबी आवाज में कहा।

उसके साथ रूपधर राजमहल में गया। वह महल चमक-सा रहा था। रूपधर अन्दर घुसने में कुछ हिचकिचाया। वहीं खड़ा होकर मशालों की रोशनी में काम करते गुलामों को और चार एकड़ के फलों के बाग को उसने देखा। आखिर उसने साहस करके अन्दर प्रवेश किया। वारुणी के कथनानुसार वह सीधा अन्दर चला गया।

अन्दर एक विशाल भवन में नगर के सब बड़े लोग भोजन के लिए बैठे हुए थे।

रूपधर वहाँ से चलता हुआ अन्दर गया। वहाँ उसे राजा और रानी दिखाई दिये। रूपधर ने रानी के सामने घुटने टेककर कहा- "महारानी! मैं एक अभागा हूँ। में आपका आश्रय पाने यहाँ आया हूँ। आप और आपका परिवार दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करे। मैं स्वदेश वापिस जाने के लिए आपकी मदद चाहता हूँ। आशा करता हूँ कि आपकी भरपूर सहायता मिल सकेगी।

उसका यह कहना सुन वहाँ उपस्थित सब लोगों को अचरज हो रहा था। आखिर एक बूढ़े ने महामेधी से कहा-"हमारे अतिथि का फर्श पर यों बैठना हमारे लिए अपमानजनक है। इसलिए इनको आप एक अच्छे आसन पर बिठाकर भोजन के लिए नितन्त्रित कीजिये। मर्यादा कीजिये।"

महामेधी उठा और रूपधर का हाथ पकड़कर उसे उसने अपनी बगल में, अपने बड़े लड़के के आसन पर बिठाया। रूपधर के लिए आसन खाली करके बड़ा लड़का कहीं और जाकर बैठ गया। फिर सबने मिलकर भोजन किया।

भोजन के बाद, महामेधी ने खड़े होकर उपस्थित लोगों से इस प्रकार कहा-"आप सबने भोजन कर लिया है। आज आप सब अपनी अपनी जगह पर विश्राम कीजिये। कल सवेरे बड़े तड़के हम मिलेंगे और अपने अतिथि के मनोरञ्जन का कार्यक्रम बनायेंगे। फिर उनकी यात्रा के बारे में सोचेंगे। उनका स्वदेश चाहे कितनी भी दूर हो, उनको सुखी सुरक्षित वहाँ पहुँचाना हमारा कर्तव्य है। भले ही हम कितने ही प्रयत्न करें, यदि उनके भाग्य में कष्ट झेलना लिखा है तो हम कुछ नहीं कर सकते। अगर ये मनुष्य रूप में देवता हो, तो भी हमारे लिए यह कोई नई बात नहीं है। आदि काल से देवता, नर रूप धारण करके हमें देखने, हमारे मनोरञ्जन में हिस्सा लेने के लिए आते रहे हैं। यह आप सब जानते ही हैं।"

यह सुन रूपधर ने कहा-"महाराज! आप इस प्रकार के अनुमान न कीजिये। मैं देवता नहीं हूँ। मनुष्य ही हूँ। और ऐसा मनुष्य जिसने नाना प्रकार के कष्ट झेले हैं। जो कष्ट मैंने



झेले हैं, शायद किसी और ने नहीं झेले होंगे। इसलिए कष्ट दूर करने के लिए मेरी सहायता कीजिये। मरने से पहले मेरी एक ही इच्छा है। वह है स्वदेश जाने की और बन्धुबान्धवों को यथाशीघ्र देखने की।"

यह सुन सबने रूपधर के प्रति सहानुभूति प्रकट की। सबके चले जाने के बाद रूपधर, राजा और रानी वहाँ रह गये।

रानी ने मुड़कर जब रूपधर के कपड़े देखे तो उसको मालूम हुआ कि वे उसके

सिये हुए थे। "बेटा! मैं ही तुमसे पहले प्रश्न करती हूँ। तुम कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? तुम्हें यह पोषाक किसने दी? तुमने कहा था कि तुम समुद्र यात्रा से आये हो।"

रूपधर ने, जब से वह सम्मोहिनी की कैद से निकला था तब से जो कुछ गुज़रा था, वह सब सुनाया। उसने यह भी न छुपाया कि कैसे वह वारुणी से मिला था और कैसे उसने उसे भोजन-वस्त्र वगैरह दिये थे।

तब महामेधी ने कहा-"तो मेरी लड़की ने बड़ी गलती की है। उसे आपको अपने साथ लाना चाहिये था। सत्कार करना चाहिये था।

"महाराज! आप उनकी आलोचना न कीजिये। उन्होंने मुझे अपने साथ बुलाया था। पर मैं ही आने में हिचका।" रूपधर ने कहा।

"अगर आप यह कहते कि आप मेरी लड़की से विवाह करके यहाँ रहेंगे, तब भी मुझे कोई आपत्ति न होती। आपको किसी प्रकार का कोई सङ्कोच करने की जरूरत नहीं। आज रात आराम कीजिये। कल हम आपकी यात्रा की सब तैयारियाँ करेंगे, ताकि आप सुरक्षित अपने देश पहुँच जायें। हमारे जहाजों से जहाज, हमारे नाबिक से नाविक आपको संसार में कहीं न मिलेंगे।" राजा ने अभिमानपूर्वक कहा। वे जब इस प्रकार बातें कर रहे थे, तब रानी ने उसके लिए विस्तरा लगवाया। रूपधर अपने कष्ट भूल गया और उस शैय्या पर आराम से सो गया।

[अभी और है]





दो भाई

एक गाँव में एक गरीब रहा करता था। उसके बच्चे न थे। उसकी सारी सम्पत्ति-केवल एक घर, एक घोड़ी और कुतिया मात्र थी। सवेरे होते ही वह अपनी घोड़ी को लेकर जङ्गल जाता। लकड़ियाँ काट कर शाम को घर वापस आता।

एक दिन जब लकड़ियाँ काटकर वह घर वापस आ रहा था तो उसे रास्ते में एक आम का पेड़ दिखाई दिया। उस पर दो ही आम लगे थे। वह उन्हें तोड़कर घर ले गया। उसकी स्त्री ने उनका रस निकालकर एक गिन्नी में डाला। छिलके निकालकर घोड़ी के सामने डाल दिये और गुठलियाँ आङ्गन में फेंक दी। जब पति-पत्नी ने रस पी लिया तो कुतिया ने आकर गिन्नी चाट ली।

इसके फल स्वरूप कुतियों के दो बच्चे हुए। घोड़ी के दो बच्चे हुये। लकड़हारे की पत्नी के भी दो सुन्दर बच्चे हुये और आङ्गन में जहाँ दो गुठलियाँ गिरी थीं, वहाँ सोने की तलवारे उग आईं।

गरीब के दोनों लड़के बड़े हुये। एक दिन बड़े लड़के ने पिता से कहा- "पिताजी, हम सिवाय दुखों के सुख नहीं जानते। इसलिये में देश विदेश घूमकर बन कमाऊँगा।" उनके दोनों लड़के, उनकी दो आँखों की तरह थे, इसलिये उनमें से एक का चला जाना माँ बाप को न भाया। उन्हें इसका अफसोस था कि वे लकड़ियाँ काटकर रोजी कर रहे थे। अलावा इसके दोनों लड़के एक जैसे थे। अगर किसी एक को देखेंगे, तो समझ लेंगे कि दोनों को देख लिया है। इसलिये अपने बड़े लड़के को देश विदेश जाने की उन्होंने अनुमति दे दी।

राम नारायण



बड़ा लड़का एक सोने की तलवार लेकर, एक घोड़े पर सवार होकर एक कुत्ते को साथ लेकर निकल गया। छोटा लड़का गाँव के बाहर तक भाई को छोड़ने को गया।

जब वह वापिस आ रहा था तो बड़े भाई ने एक काँच की गिन्नी देकर कहा-"भाई, देखो इसमें पानी कितना साफ है। यह जिस दिन मैला हो जाये तो समझना कि मुझपर आपत्ति आ पड़ी है। हो सके तो तुम आकर मेरी रक्षा करना। पर माता और पिता जी से न कहना कि मुझ पर आपत्ति आ पड़ी है।" छोटा भाई काँच की गिन्नी लेकर घर चला आया। बड़ा भाई सफर करता करता कुछ दिनों बाद एक नगर में पहुँचा। वह जब राजमहल के सामने से जा रहा था तो राजकुमारी ने उसको देखा।

वह तुरन्त भागी भागी अपने पिता के पास गई। उसने उससे रास्ते पर जाते हुए युवक को आतिथ्य देने के लिए कहा। बुलाने के लिए कहा।

क्योंकि यह उसकी इकलौती लड़की थी; इसलिए राजा उसकी बातें ठुकराता न था। उसने अपने सैनिको को भेजकर लकड़हारे के लड़के को बुलवाया। हाथ में सोने की तलवार लिये उसको सूर्य की तरह चमचमाता देखकर राजपरिवार बहुत प्रभावित हुआ। यह जानकर कि उसकी लड़की उससे प्रेम कर रही है, एक शुभमुहूर्त में राजा ने दोनों का विवाह कर दिया। बड़े पैमाने पर उत्सव, जलूस आदि निकाले गये।

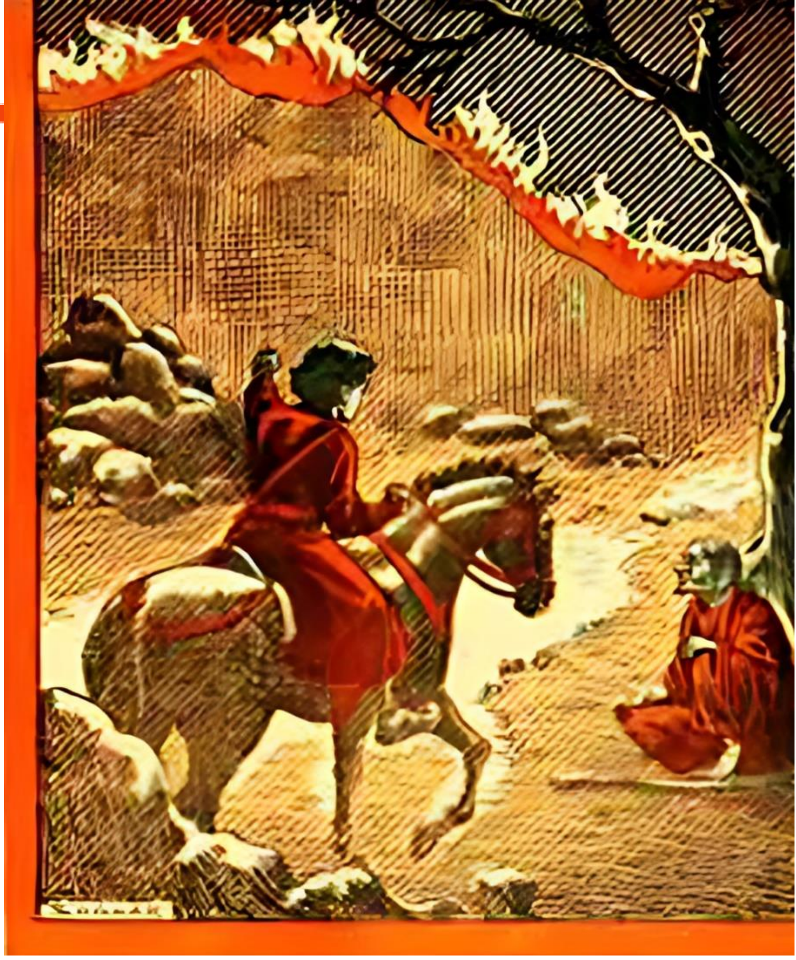
एक दिन रात को भोजन के बाद, राजा का दामाद और लड़की ठण्डी हवा खाने छत पर गये। जब उसने चारों ओर घूमकर देखा तो थोड़ी दूर पर एक पहाड़ बड़े विचित्र ढङ्ग से जल रहा था। उसने

आश्चर्य से अपनी पत्नी की ओर मुड़कर पूछा-"वह क्या है? वह पहाड़ क्यों यों जल रहा है?"

"उसे यहाँ सब बिजली का पहाड़ कहते हैं। दिन में उस पर बिजली का गर्जन सुनाई पड़ता है और रात को वह इस प्रकार जलता है। कुछ भी हो कोई उसके पास नहीं जाता और जो जाते हैं वे वापिस नहीं आते हैं। लोग कहते हैं कि वे पत्थर हो जाते हैं। आप गलती से भी उस तरफ न जाइये।" राजकुमारी ने आगाह करते हुए कहा।

वह कुछ न बोला। अगले दिन बड़े सवेरे वह उठा। तलवार लेकर घोड़े पर सवार हो, कुत्ते को साथ लेकर बिजली के पहाड़ की ओर निकल गया। जब वह पहाड़ के पास गया तो सूर्य अच्छी तरह निकल चुका था। वह पहाड़ पर चढ़ रहा था तो एक पेड़ के नीचे एक पत्थर पर कोई बुढ़िया बैठी हुई दिखाई दी।

"दादी! इस पहाड़ के बारे में नाना प्रकार की बातें कही जाती हैं। असली बात क्या है, क्या तुम बता सकती हो?" उसने बुढ़िया से पूछा।



"मैं यहीं रहती हूँ। क्यों नहीं बताऊँगी, बेटा! आ, हमारे घर आ। इस पहाड़ के बारे में सब कुछ विस्तार से बताऊँगी।" कहती हुई बुढ़िया उठी और रास्ता दिखाने लगी।

रास्ते में उसे रह रहकर रुक रुककर एक प्रकार के पौधे के पत्तों को तोड़ता देख उसको अचरज हुआ-"इन पत्तों का इस बुढ़िया को क्या काम ?"

थोड़ी देर बाद बुढ़िया उसको एक गुफा में ले गई। उसने दो कदम आगे बढ़कर आश्चर्य से इधर उधर देखा। सब

जगह पत्थर की मूर्तियाँ थीं। परन्तु वे मूर्तियाँ न थी, मनुष्य ही थे। उनकी आँखें अब भी देख रही थीं। बाकी शरीर पथरा गया था।

वह डरा। पत्थर होने से पहले उसने भाग जाना चाहा। पर हिल न सका। उसका सारा शरीर जम-सा गया। उसे लगा कि वह पत्थर हो गया है। बुढ़िया कोई जादूगरनी थी। उसने जैसे औरों को धोखा दिया था वैसे उसे भी दिया। पत्नी ने बताया भी था कि खतरा है, फिर भी उसने उसकी न सुनी।

बड़े भाई पर इस तरह शामत आई थी कि छोटे भाई के यहाँ काँच की गिन्नी में पानी मैला हो गया। वह जान गया कि उसके भाई पर कोई आपत्ति आ पड़ी थी। उसने अपने माँ-बाप से कहा कि वह जरा गाँव से बाहर जाकर आयेगा। दूसरी तलवार लेकर दूसरे घोड़े पर सवार हो दूसरे कुत्ते को साथ लेकर वह घर से निकल पड़ा।

वह जाता जाता उसी नगर में पहुँचा जहाँ उसका भाई गया था। जब वह गली में जा रहा था तो लोग चिल्लाने लगे-



"वह देखो, राजा के दामाद, वे फिर चले आ रहे हैं। वही आदमी, वही तलवार, वही घोड़ा, वहीं कुतिया।" छोटे भाई को देखकर उनको वह भ्रम हुआ।

यह देखकर छोटा भाई जान गया कि उसका भाई उस नगर में पहुँचकर, वहाँ के राजा का दामाद भी हो गया था। जब से दामाद गायब हो गया था तब से राजा उसकी खोज करवा रहा था। इसलिए राज-सैनिकों ने छोटे भाई को घेरकर कहा-"महाराज आप के लिए व्याकुल हुए बैठे हैं। आइये।" वे उसको तुरन्त अपने साथ ले गये।

"इतने दिन कहाँ थे? जानते हो हम कितना घबरा गये थे।" राजा ने कहा।

"अकेला शिकार खेलने गया था। रास्ता भटक गया।" छोटे भाई ने कहा। उसने यह न बताया कि वह दूसरा व्यक्ति था।

राजमहल में सबको विश्वास हो गया कि वह राजा का दामाद ही था। पहले राजकुमारी ने भी विश्वास किया। परन्तु छोटे भाई ने उसकी ओर इस तरह देखा,





जैसे कह रहा हो-"ओहो, तो ये हमारी भाभी हैं।" उस नज़र ने राजकुमारी में सन्देह उत्पन्न किया।

फिर भी सच जानने के लिए वह उसको भोजन के बाद महल की छत पर ले गई। उसने अपने भाभी से कह दिया कि वह उसका देवर था। उससे यह भी कहा कि वह किसी को यह न बताये। उसका सन्देह सच निकला।

दूरी पर पहाड़ को जलता देखकर उसने हैरान होकर पूछा-"क्यों वह पहाड़ यों जल रहा है?"

राजकुमारी ने बिजली के पहाड़ के बारे में उसे बताकर कहा-"वहाँ जाना बड़ा खतरनाक है। यह बात मैंने तुम्हारे भाई से भी कही थी।"

फिर राजकुमारी, उसको एक और शयन कक्ष में भेजकर अपने शयन कक्ष में चली गई।

छोटा भाई जान गया कि जरूर उसका भाई बिजली के पहाड़ पर गया होगा, और वहाँ किसी आफत में फँस गया होगा। अगले दिन सवेरे उठकर अपनी तलवार लेकर, कुत्ते को साथ लेकर, घोड़े पर सवार होकर पहाड़ की ओर निकल पड़ा।

बुढ़िया जादूगरनी पहले की तरह, पहाड़ पर, पेड़ के नीचे एक पत्थर पर बैठी थी। एक मनुष्य के आने की आहट सुन, उस बुढ़िया ने सिर उठाकर देखा तो आश्चर्य से वह काठ की सी हो गई। वही आदमी, वही तलवार, वही घोड़ा, वही कुतिया। वह बुढ़िया न जान सकी कि जो आदमी उसकी गुफा में पथरा गया था, वह फिर कैसे वापस आया था। उसे वह अजीब जादू सा लगा।

छोटा भाई, बुढ़िया के मुँह पर आश्चर्य देख, एक क्षण में सच्चाई जान गया। वह यह भी ताड़ गया कि उसी के कारण उसके भाई पर आपत्ति आई थी।

उसने बुढ़िया पर लपककर पूछा- "पिशाच, तूने ही मेरे भाई को पत्थर बनाया था?" जब तलवार की पैनी धार छाती पर लगी तो बुढ़िया के प्राण ऊपर ही ऊपर रह गये। "मैं तुम्हारे भाई को जिला दूँगी। मेरा कुछ न बिगाड़।"

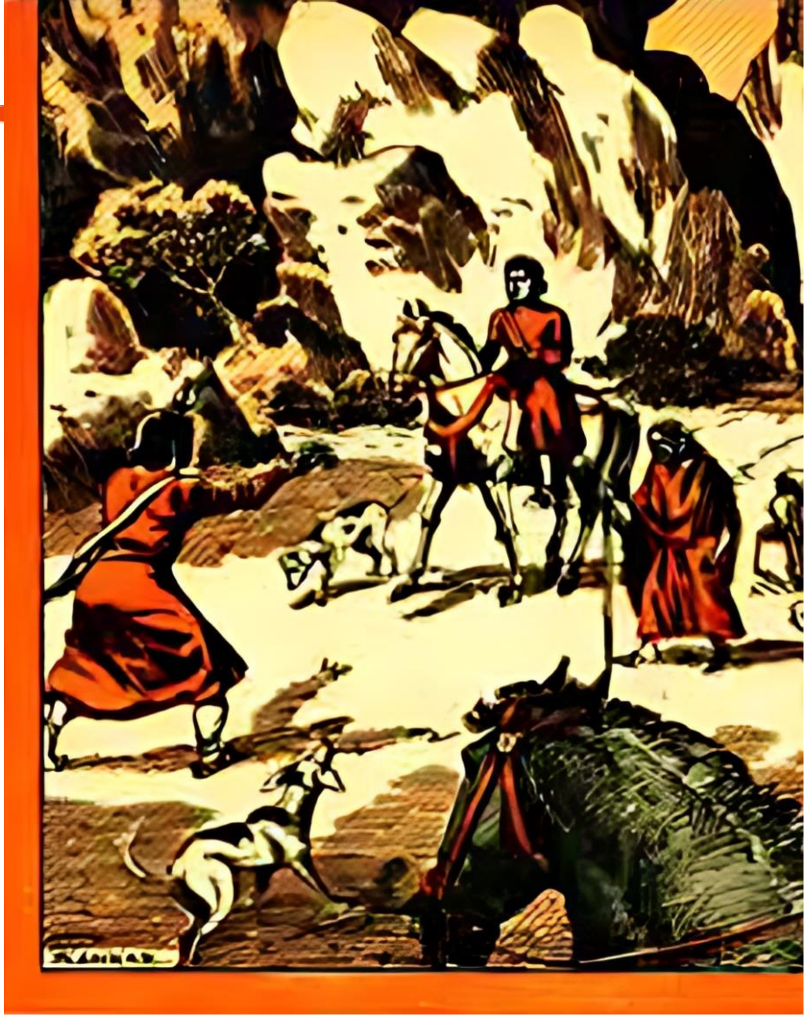
"मेरे भाई को अभी जिला। " छोटे भाई ने कहा।

"यहाँ रह, मैं उसे भेजती हूँ।" बुढ़िया ने कहा। वह जाकर बड़े भाई को साथ लाई। उसके साथ, उसका घोड़ा ओर कुतिया भी थी।

"जान बच गई।" छोटे भाई ने कहा। बुढ़िया चली गई। बड़े भाई ने जो कुछ गुजरा था भाई को सुनाया।

"कुछ भी हो। अब हमारी आपति टल गई है। आ चल चलें।" छोटे भाई ने कहा।

परन्तु बड़ा भाई न हिला-"भाई, मुझ जैसे अभागे इस गुफा में कितने ही हैं। उनको छुड़ाना भी हमारा कर्तव्य है।" उसने कहा।



यह बात तभी क्यों न कही, जब बुढ़िया यहाँ थी। अब क्या किया जाय?" छोटे भाई ने पूछा।

दोनों ने बहुत देर तक सोचा। बड़े भाई को यकायक एक उपाय सूझा।

"बुढ़िया एक प्रकार के पत्ते लेकर उस गुफा में आती है। उस दिन तो देखा ही था। आज भी देखा। उन पत्तों में कोई महिमा है। उन्हें जो हाथ में पकड़ लेता है, वह उस गुफा में जाकर भी नहीं

पथराता।" उसने अपने छोटे भाई से कहा।

छोटे भाई को भी यह बात ऐसी लगी, जिस पर विश्वास किया जा सकता था। दोनों ने मिलकर वे पत्ते इकट्ठे किये और गुफा में गये।

वे गुफा में गये, पर वे पत्थर न हुए। यही नहीं उन पत्तों के छुआने पर, हर आदमी फिर मनुष्य रूप में आ गया। इस तरह, वहाँ कैद सब आदमियों को उन्होंने छुड़ाया और उनको गुफा से बाहर भेज दिया।

फिर छोटा भाई बुढ़िया को खींचकर बाहर ले जाकर मारने को ही था कि बड़े भाई ने रोककर कहा-"भाई उसका मरना उसके लिए काफी सजा नहीं है। मैं उसको ठीक सजा दूँगा। देख।" कहते हुए उसने बुढ़िया के हाथों से पत्ते खींच लिए और उसको गुफा में धकेल दिया। गुफा में जाते ही बुढ़िया छटपटाकर तुरन्त पथरा गई।

फिर दोनों भाई उन पुनर्जीवित आदमियों को लेकर नगर में गये। राजा को, दामाद को देखकर आश्चर्य हुआ। दूसरों को भी अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ।

गुफा से जो बाहर आये थे, वे मनुष्य थे, मगर उनमें एक राजकुमारी भी थी। उस लड़की के साथ छोटे भाई ने शादी की, दोनों भाई उसी नगर में रहने लगे। उन्होंने अपने माँ बाप को भी वहाँ बुला लिया।

बड़ा भाई, काल क्रम से राजा बना। उसने अपने छोटे भाई को मन्त्री बनाया। वे बहुत दिनों तक आराम से रहे।





खरगोश के भालू को लोमड़ी के आँगन में, फन्दे में फँसाने के बहुत दिनों बाद एक दिन वे दोनों कहीं जाते जाते अचानक मिले।

मालू ने खरगोश की ओर घूरकर देखा। खरगोश ने उससे पूछा-"अरे भालू भाई, कितने दिनों बाद दिखाई दिये। भाभी बच्ची सब ठीक हैं न? कुशल है न?"

भाभी का मतलब भालू की पत्नी से था। भालू की एक लड़की थी। यद्यपि भालू मन ही मन जल रहा था, तो भी मुँह पर उसने कुछ न दीखने दिया। उसने सिर हिलाते हुए कहा-"हाँ, सब ठीक हैं।"

फिर वे दोनों एक साथ इस तरह चले, जैसे कोई पुराने दोस्त हो। खरगोश की नजर भालू पर थी ही, कहीं ऐसा न हो कि अचानक वह उसका गला घर दबोचे, वह सावधान था।

दोनों के कुछ दूर चलने के बाद खरगोश ने कहा-"भाई, मैं तुम्हारी एक मदद करना चाहता था, पर तुम कहीं दिखाई ही न दिये।"

"क्या है वह मदद?" भालू ने उत्सुकता से पूछा।

"और कुछ नहीं.... हमारे बाग में एक बड़ा सूखा पेड़ है, उस पर एक बहुत बड़ा छत्ता लगा है, इतना बड़ा कि तुम्हारे सारे परिवार के लिए एक महीने भर का शहद मिल जायेगा। इधर उधर जाने की जरूरत न होगी।" खरगोश ने कहा।

"सूखे पेड़ पर?" भालू ने पूछा।

"हाँ।"

श्री सुमन कुमार जोशी

"उसके तने में एक खोल है। अगर उसमें से निकल कर ऊपर पहुँच गये, तो मैं एक बड़े डण्डे से तेरी तरफ छत्ता झुका दूँगा। तू उसे पकड़ कर तुरन्त नीचे आ सकता है।"

"तो फिर देरी किस बात की है? चलो।" भालू ने कहा।

दोनों मिलकर, खरगोश के बाग के पास पहुँचे।

"यह देखो शहद की सुगन्ध।" भालू ने कहा।

"यह देखो सूखा पेड़।" खरगोश ने कहा।

"वह लो शहद का छत्ता।" भालू ने कहा।

"वह देखो तने में खोल।" खरगोश ने कहा।

दोनों वृक्ष के समीप गये।

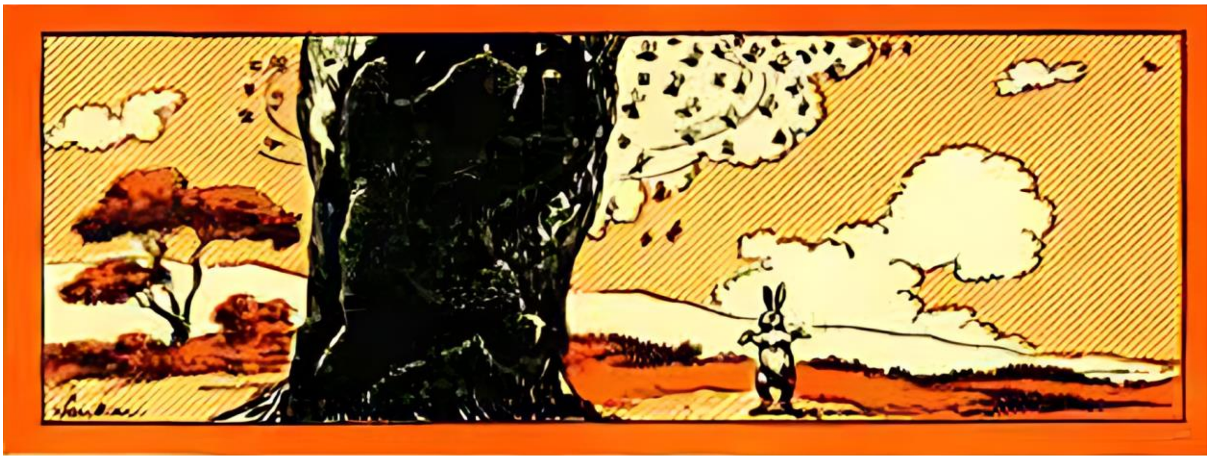
"देख भाई! उस खोल में से निकलकर ऊपर चले जाओ। इस बीच मैं डण्डे से तेरी तरफ छत्ता झुकाये देता हूँ।" खरगोश ने कहा।

भालू यह मान गया। उसने खोल में सिर रखा। इस बीच खरगोश ने छत्ते को छेड़ दिया और मक्खियों को जगा दिया। वे तिलमिला उठीं। वे खोल से नीचे उतर आयी और भालू के सिर पर काटने लगी।

"शहद सारा चू रहा है भाई, पी ले।" खरगोश चिल्लाने लगा।

भालू को कहीं शहद न दिखाई दिया। मक्खियों के काटने से उसका सारा शरीर फूल गया था। इसलिए वह खोल से बाहर भी न निकल सका।

"भला वह मजा क्या जाने शहद का जिसका फूला हो सिर?" कहता खरगोश वृक्ष के चारों ओर नाचने गाने लगा।



CHANDAMAMA (Hindi) MARCH 1958 Regd. No. M. 5452



रूपधर की यात्राएँ